वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 232
ISBN 978-93-82071-00-6

श्री पार्श्वनाथ विधान

–रचयित्री–

तीर्थंकर जन्मभूमियों के विकास की प्रेरणास्रोत
युगप्रवर्तिका गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

शरदपूर्णिमा महोत्सव, 11 अक्टूबर 2011 को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में
पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा घोषित
''प्रथम पट्टाचार्य श्री वीरसागर वर्ष'' के अन्तर्गत प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.-250404
फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com

COURTESY—JAIN BOOK DEPOT
C/o Shri Nabhi Kumar Manav Kumar Jain
C-4, Opp. PVR Plaza, Cannaught Place, New Delhi-1
Ph.-011-23416101-02-03/Website : www.jainbookdepot.com

चतुर्थ संस्करण | वीर नि. सं. 2538, चैत्र शु. त्रयोदशी | मूल्य
2200 प्रतियाँ | 5 अप्रैल 2012, महावीर जयंती | 20/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

–: निर्देशक एवं सम्पादक :–

स्वस्तिश्री कर्मयोगी पीठाधीश रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

–: प्रबंध सम्पादक :–

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण (सन् 2003)—2200 प्रतियाँ
द्वितीय संस्करण (सन् 2006)—2200 प्रतियाँ
तृतीय संस्करण (सन् 2008)—2200 प्रतियाँ

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

प्रस्तावना

-ब्र. कु. इन्दु जैन (संघस्थ)

भक्तिमार्ग में प्रवृत्त प्रत्येक प्राणी निवृत्ति की साधना करता हुआ अपनी चैतन्य स्वरूपी आत्मा को उज्ज्वल कर परमात्मा बना सकता है। श्रावक चूँकि सावद्य से पूर्णरूपेण निवृत्त नहीं हो सकता है अतः वह षट्आवश्यक कर्तव्यों का परिपालन करते हुए आंशिकरूप से अपने पापकर्मों की निर्जरा करता है। आचार्य श्री कुन्दकुन्द देव ने उन षट्आवश्यक कर्त्तव्यों में 'दाणं पूजामुक्खो' दान एवं पूजा को मुख्य बताया है।

देवपूजा के अन्तर्गत परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की साहित्यिक लेखनी द्वारा रचित अनेकों वृहद् एवं लघु विधानों का आयोजन कर भक्तगण मनोवाञ्छित कार्य की सिद्धि के साथ आत्मा में विशेष विशुद्धि उत्पन्न कर पुण्यसंचय भी करते हैं। आज भौतिक चकाचौंध में फंसा हुआ प्राणी आत्मशांति एवं कार्यसिद्धि हेतु नाना प्रकार से मिथ्यात्व की शरण लेता है लेकिन जब सद्गुरुओं का समागम प्राप्त होता है तब सज्ज्ञान को प्राप्त कर इन महाविधानों का आयोजन कर अपूर्व आत्मिक शांति के अनुभव के साथ-साथ मनवाञ्छित फल की भी प्राप्ति करता है। वास्तव में आगमविधि से किया गया छोटा सा विधान भी विशेष चमत्कारिक फल को प्रदान करता है।

अतिशायी फल को प्रदान करने वाले अनेकों लघु एवं वृहद् विधानों की शृंखला में **पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी** द्वारा रचित ऐसा ही यह एक विधान है- "**श्री पार्श्वनाथ विधान**"। तीर्थंकर भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) में रचित इस विधान का चमत्कार विधान की रचना करते-करते ही अनुभूति में आया और वैसे भी भगवान पार्श्वनाथ जिन्होंने क्षमाधर्म का अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत करते हुए दस भवों तक कमठ का उपसर्ग सहा और भगवान पार्श्वनाथ बने वह विघ्नहरण, संकटहर्ता आदि अनेक नामों से जाने जाते हैं और उनकी पूजा, भक्ति से अनेक मनोरथों की सिद्धि हो जाती है, फिर भक्ति में निकले हुए शब्द तो अकालमृत्यु व असाध्य रोगों को भी टालने में सक्षम होते हैं अतः कोई चमत्कार हो जाए तो कोई अतिशयोक्ति वाली बात नहीं है।

पूज्य माताजी द्वारा लिखित इस विधान में भगवान पार्श्वनाथ के १०८ मंत्र हैं। ऐसे चमत्कारिक विधान को करके आप सब मनवाञ्छित फल की प्राप्ति करने के साथ-साथ प्रभु भक्ति के द्वारा अपनी आत्मा को पवित्र बनाने में भी सफल होवें यही शुभेच्छा है।

विधान की रचयित्री परमपूज्य गणिनीप्रमुख

श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान — टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि — आसोज सुदी १५ (शरदपूर्णिमा) वि. सं. १९९१, (२२ अक्टूबर सन् १९३४)

जाति — अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र** — गोयल, **नाम** — कु. मैना

माता-पिता — श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत — ई. सन् १९५२ में बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा — चैत्र कृ. १, ई. सन् १९५३ को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम — क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा — वैशाख कृ. २, ई. सन् १९५६ को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती १०८ आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व — अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं २५० विशिष्ट ग्रंथों की लेखिका। सन् १९९५ में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा "डी.लिट्." की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा — हस्तिनापुर में जंबूद्वीप तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा — भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की ३१-३१ फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन १०८ फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा — पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। **विशेषरूप से २१ दिसम्बर २००८ को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।**

शैक्षणिक प्रेरणा — 'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा — जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (१९८२ से १९८५), समवसरण श्रीविहार (१९९८ से २००२), महावीर ज्योति (२००३-२००४) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-संक्षिप्त परिचय

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की स्थापना पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से सन् १९७२ में राजधानी दिल्ली में हुई थी। संस्थान का मुख्य कार्यालय सन् १९७४ से हस्तिनापुर में प्रारंभ हुआ। इस संस्थान के अन्तर्गत अनेक गतिविधियाँ हस्तिनापुर में तथा अन्यत्र चल रही हैं—

१. सन् १९७२ से वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला के माध्यम से लाखों ग्रंथ प्रकाशित हो रहे हैं।

२. सन् १९७४ से इस संस्थान के मुखपत्र के रूप में 'सम्यग्ज्ञान' हिन्दी मासिक पत्रिका का निरंतर प्रकाशन हो रहा है।

३. सन् १९७४ से १९८५ तक हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण कार्य हुआ।

४. सन् १९७४ से अब तक जम्बूद्वीप रचना के अतिरिक्त अनेक जिनमंदिरों का निर्माण हुआ है—कमल मंदिर, तीन मूर्ति मंदिर, ध्यान मंदिर, शांतिनाथ मंदिर, वासुपूज्य मंदिर, ॐ मंदिर, सहस्रकूट मंदिर, विद्यमान बीस तीर्थंकर मंदिर, आदिनाथ मंदिर, अष्टापद मंदिर, ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ, स्वर्णिम तेरहद्वीप रचना, नवग्रहशांति जिनमंदिर, तीन लोक रचना एवं श्री शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की ३१-३१ फुट उत्तुंग प्रतिमाओं की स्थापना ।

५. जम्बूद्वीप पुस्तकालय जिसमें लगभग १५००० ग्रंथ संग्रहीत हैं।

६. णमोकार महामंत्र बैंक जिसमें भक्तों द्वारा लिखकर भेजे गये करोड़ों णमोकार मंत्र जमा किये जाते हैं।

७. समय-समय पर शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों तथा संगोष्ठियों के आयोजन किये जाते हैं।

८. यात्रियों के शुद्ध भोजन के लिए राजा श्रेयांस भोजनालय का संचालन।

९. यात्रियों के ठहरने के लिए आधुनिक सुविधायुक्त डीलक्स फ्लैट्स वाली कई धर्मशालाओं तथा कोठियों एवं बंगलों का निर्माण किया गया है।

१०. जम्बूद्वीप परिक्रमा के लिए नौका विहार, ऐरावत हाथी तथा मनोरंजन हेतु मिनी ट्रेन, झूले आदि हैं।

११. ज्ञानमती कला मंदिरम् में हस्तिनापुर के प्राचीन इतिहास से संबंधित झाँकियाँ हैं।

१२. तीर्थंकर जन्मभूमियों की वंदना एवं धार्मिक फिल्मों का प्रदर्शन करने वाले थियेटर से समन्वित गणिनी ज्ञानमती हीरक जयंती एक्सप्रेस।

दिल्ली, मेरठ, मुजफ्फरनगर, हरिद्वार, झाँसी, तिजारा आदि से जम्बूद्वीप स्थल तक आने के लिए दिन भर बसें मिलती रहती हैं।

दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार में भव्य "नंद्यावर्त महल" तथा प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में निर्मित तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का भी संचालन होता है।

जम्बूद्वीप एवं अन्य रचनाओं के दर्शन हेतु हस्तिनापुर पधारकर आध्यात्मिक एवं भौतिक सुख की प्राप्ति करें।

चौबीस तीर्थंकरों की सोलह जन्मभूमियों की नामावली

महानुभावों,

अपने नगर के जिनमंदिरों में चौबीस तीर्थंकरों की सोलह जन्मभूमियों के नाम निम्नानुसार लिखवाएं एवं इन तीर्थों की यात्रा करके पुण्यलाभ प्राप्त करें।

1. अयोध्या (फैजाबाद-उ.प्र.)	—श्री ऋषभदेव भगवान
	—श्री अजितनाथ भगवान
	—श्री अभिनंदननाथ भगवान
	—श्री सुमतिनाथ भगवान
	—श्री अनंतनाथ भगवान
2. श्रावस्ती (बहराइच-उ.प्र.)	—श्री संभवनाथ भगवान
3. कौशाम्बी (उ.प्र.)	—श्री पद्मप्रभु भगवान
4. वाराणसी (उ.प्र.)	—श्री सुपार्श्वनाथ भगवान
	—श्री पार्श्वनाथ भगवान
5. चन्द्रपुरी (वाराणसी) उ.प्र.	—श्री चन्द्रप्रभु भगवान
6. काकन्दी (देवरिया नि.-गोरखपुर) उ.प्र.	—श्री पुष्पदंतनाथ भगवान
7. भद्रिकापुरी, इटखोरी (चतरा-झारखंड)	—श्री शीतलनाथ भगवान
8. सिंहपुरी (सारनाथ) उ.प्र.	—श्री श्रेयांसनाथ भगवान
9. चम्पापुरी (भागलपुर-बिहार)	—श्री वासुपूज्यनाथ भगवान
10. कम्पिलपुरी (फर्रूक्खाबाद-उ.प्र.)	—श्री विमलनाथ भगवान
11. रत्नपुरी (फैजाबाद-उ.प्र.)	—श्री धर्मनाथ भगवान
12. हस्तिनापुर (मेरठ-उ.प्र.)	—श्री शांतिनाथ भगवान
	—श्री कुन्थुनाथ भगवान
	—श्री अरनाथ भगवान
13. मिथिलापुरी	—श्री मल्लिनाथ भगवान
	—श्री नमिनाथ भगवान
14. राजगृही (नालंदा-बिहार)	—श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान
15. शौरीपुर (बटेश्वर-उ.प्र.)	—श्री नेमिनाथ भगवान
16. कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार)	—श्री महावीर भगवान

—निवेदक—

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थंकर जन्मभूमि विकास कमेटी

प्रधान कार्यालय —**जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.**, फोन नं.-01233-280184, 280236

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के शिरोमणि संरक्षक

१. श्रीमती निर्मला जैन ध.प. स्व. श्री प्रेमचन्द्र जैन, तत्पुत्र प्रदीप कुमार जैन, खी बावली, दिल्ली-६।
२. श्रीमती सुमन जैन ध.प. श्री दिग्विजय सिंह जैन, इंदौर।
३. श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति, जी-१९, साऊथ एक्सटेन्शन, नई दिल्ली।
४. श्री महेन्द्र पाल हरेन्द्र कुमार जैन, सूरजमल विहार, दिल्ली।
५. श्रीमती मोहनी जैन ध.प. श्री सुनील जैन, प्रीत विहार, दिल्ली।
६. श्री देवेन्द्र कुमार जैन (धारूहेड़ा वाले) गुड़गाँव (हरि.)।
७. श्रीमती शारदा रानी जैन ध.प. स्व. रिखबचंद जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-९२।
८. डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
९. श्रीमती संगीता जैन ध.प. श्री संजीव कुमार जैन, शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र.
१०. श्री अनिल कुमार जैन, दरियागंज, दिल्ली
११. श्री बी.डी. मदनाइक, मुम्बई
१२. श्री धनकुमार जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-९२।
१३. श्री जितेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती सुनीता जैन कोटड़िया, फ्लोरिडा, यू.एस.ए.
१४. श्रीमती विमला देवी जैन ध.प. श्री ओमप्रकाश जैन, स्वालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
१५. श्री अमित जैन एवं संभव जैन सुपुत्र श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री मूलचंद नौपाटनी, दिसपुर आसाम।
१६. श्रीमती अजित कुमारी जैन ध.प. श्री महेन्द्र कुमार जैन, ओबेदुल्लागंज (रायसेन) म.प्र.।
१७. श्री नाभिकुमार जैन, जैन बुक डिपो, सी-४, पी.वी.आर. प्लाजा के पीछे, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के परम संरक्षक

१. श्री माँगीलाल बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
२. डॉ. प्रकाशचन्द्र जैन, ७९२ विवेकानंदपुरी, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
३. श्री सुमत प्रकाश जैन, गज्जू कटरा, शाहदरा, दिल्ली।
४. श्री सुनील कुमार जैन, द्वारा-सुनील टैक्सटाईल्स, सरधना (मेरठ) उ.प्र.।
५. स्व. श्री प्रकाश चंद अमोलक चंद जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।
६. श्री प्रद्युम्न कुमार जवेरी, रोकड़ियालेन, बोरीवली (वेस्ट) मुंबई।
७. श्रीमती उर्मिला देवी ध.प. श्री कान्ती प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
८. श्रीमती उषा जैन ध.प. श्री विमल प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
९. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) , गांधीनगर, दिल्ली।
१०. श्रीमती सरिता जैन ध.प. श्री राजकुमार जैन, किदवई नगर, कानपुर।
११. स्व. श्रीमती कैलाशवती ध.प. श्री कैलाश चन्द्र जैन , तोपखाना बाजार, मेरठ।
१२. श्री भानेन्द्र कुमार जैन, द्वारा-श्री विद्या जैन, भगत सिंह मार्ग, जयपुर।
१३. श्री प्रदीप कुमार शान्तिलाल बिलाला, अनूपनगर, इंदौर, (म.प्र.)।
१४. श्री सुरेशचंद पवन कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
१५. श्री नथमल पारसमल जैन, कलकत्ता-७।
१६. श्रीमती स्व. शांताबाई ध.प. श्री कमलचंद जैन, सनावद (म.प्र.)।
१७. श्री रूपचंद जैन कटारिया, दिल्ली
१८. श्री आशु जैन, कालका जी, नई दिल्ली
१९. श्री प्रद्युम्न कुमार जैन छोटी सा., श्री अमरचंद जैन सर्राफ, लखनऊ (उ.प्र.)

तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ एवं पार्श्वनाथ जन्मभूमि

वाराणसी तीर्थ का परिचय

लेखिका-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

काशी और वाराणसी नाम से प्रख्यात बनारस नगरी कर्मभूमि के प्रारंभ में ही इन्द्र के द्वारा बसाई गई थी। यहाँ सातवें तीर्थंकर भगवान सुपार्श्वनाथ तथा तेईसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ के (जन्म तथा उन दोनों के क्रमशः) चार एवं तीन कल्याणक हुए हैं। जब वहाँ के महाराजा सुप्रतिष्ठ अपनी 'पृथ्वीषेणा' नामक महारानी के साथ राज्य कर रहे थे तब सुपार्श्वनाथ के गर्भ में आने के छह माह पूर्व से लेकर जन्म होने तक कुबेर ने लगातार पन्द्रह माह तक रानी "पृथ्वीषेणा" के महल में रत्नों की वर्षा की थी। वे भादों सुदी षष्ठी तिथि को माता के गर्भ में आए तथा ज्येष्ठ शुक्ला द्वादशी के दिन विशाखा नक्षत्र में उनका जन्म हुआ। पुनः जन्मतिथि में उन्होंने दीक्षा धारण की एवं फाल्गुन कृ. षष्ठी में उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था। सम्मेदशिखर पर्वत से भगवान सुपार्श्वनाथ ने फाल्गुन कृ. सप्तमी को निर्वाण प्राप्त किया था। इनके शरीर की ऊँचाई ९ हाथ थी, वर्ण हरा था।

इसके पश्चात् भगवान पार्श्वनाथ के संबंध में वर्णन है कि —

भगवान पार्श्वनाथ वाराणसी नगरी में पिता अश्वसेन और माता वम्मिला (वामा) से पौष कृष्णा एकादशी के दिन उत्पन्न हुए। उत्तर पुराण में इनकी माता का नाम ब्राह्मी भी आया है। तीर्थंकर पार्श्वकुमार ने विवाह नहीं किया था, तीस वर्ष की अवस्था में एक दिन राजसभा में अयोध्यानरेश जयसेन के दूत द्वारा भगवान ऋषभदेव का चरित्र सुनते-सुनते उन्हें वैराग्य हो गया था तब उन्होंने अश्ववन में जाकर जैनेश्वरी दीक्षा धारण कर ली। उन्होंने पौष कृ. ११ तिथि को दीक्षा ली एवं शंबर नामक ज्योतिषी देव (कमङ्ग नामक पूर्व भव का वैरी) के दारुण उपसर्गों को सहनकर चैत्र कृ. चतुर्थी[१] तिथि को अहिच्छत्र में केवलज्ञान प्राप्त किया तथा श्रावण शुक्ला सप्तमी के दिन सम्मेदशिखर पर्वत से मोक्षधाम को पधारे हैं। उनके बाद सम्मेदशिखर पर्वत से किसी भी तीर्थंकर ने मोक्ष की प्राप्ति नहीं की है अतः वह पर्वत वर्तमान में "पारसनाथ हिल" के नाम से जाना जाता है।

वर्तमान में बनारस नगरी हिन्दुओं के तीर्थधाम से अधिक प्रसिद्धि को प्राप्त है किन्तु प्राचीन इतिहास देखने पर ज्ञात होता है कि जिनधर्म की प्रभावना के अनेक कथानक यहाँ से जुड़े हुए हैं। सर्वप्रथम काशीनरेश अकम्पन ने अपनी पुत्री "सुलोचना" का स्वयंवर रचकर इस धरती पर स्वयंवर प्रथा प्रारंभ की थी। हस्तिनापुर के राजकुमार तथा सम्राट् भरत के प्रमुख सेनापति जयकुमार के गले में वरमाला डालकर सुलोचना ने कन्याओं को कुल परंपरा का ध्यान रखते हुए स्वाधीनता-पूर्वक अपना पति चुनने का इतिहास बनाकर कन्याओं की महत्ता प्रदर्शित की थी।

१. उत्तरपुराण में चैत्र कृष्णा चतुर्दशी मानी है।

एक अन्य पौराणिक उल्लेख के अनुसार भगवान मल्लिनाथ के तीर्थ में नौंवे चक्रवर्ती "पद्म" का जन्म बनारस में हुआ था। तब उन्होंने चक्ररत्न के द्वारा छह खंड को जीतकर बनारस को ही अपनी राजधानी बनाया था।

इसके पश्चात् यहाँ इतिहास की सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना घटी थी, वह थी समंतभद्र की। कथानक आता है कि समंतभद्र जी को मुनि अवस्था में भस्मक व्याधि हो गई थी जिसकी उपशांति के लिए उन्होंने गुरु आज्ञा से मुनिवेष का परित्याग कर दक्षिण भारत से उत्तर की बनारस नगरी में आकर एक शिवमंदिर में शिवजी की प्रतिमा को साक्षात् नैवेद्य खिलाने की बात कही थी। उस समय वाराणसी के राजा शिवकोटि थे। उन्हें एक बार मंदिर के पुजारियों से ज्ञात हुआ कि समंतभद्र महादेव जी के भोग का सारा नैवेद्य स्वयं खाते हैं। तब राजा को बड़ा क्रोध आया और उन्होंने समन्तभद्र से शिवपिण्डी के समक्ष गलती स्वीकार करके नमस्कार करने को कहा। समन्तभद्र की भस्मक व्याधि तब तक शान्त हो चुकी थी, उन्होंने भावपूर्वक चौबीसों तीर्थंकर की स्तुति रचना करके उसे पढ़ना शुरू कर दिया। जब वे भगवान चन्द्रप्रभु की स्तुति पढ़ रहे थे तभी शिवपिण्डी फट गई और चन्द्रप्रभ की प्रतिमा उसमें से प्रगट हो गई। यह चमत्कार देखकर राजा शिवकोटि भी उनके अनुयायी बन गए। समन्तभद्र ने पुनः मुनिदीक्षा लेकर स्व-पर कल्याण किया।

हिन्दी के प्रसिद्ध कवि बनारसीदास भी यात्रा के निमित्त काशी में आए थे। उनके लिखे हुए अर्द्धकथानक नामक आत्मचरित ग्रंथ से पता चलता है कि वे व्यापार आदि के सिलसिले में वाराणसी कई बार आते थे।

बनारस के स्थानीय भारत-कला भवन में पुरातत्त्व संबंधी बहुमूल्य सामग्री संग्रहीत है। यहाँ राजघाट तथा अन्य स्थानों पर खुदाई में जो पुरातत्त्व सामग्री उपलब्ध हुई थी, वह इस कला भवन में सुरक्षित है। यह सामग्री विभिन्न युगों से संबंधित है। इसमें पाषाण और धातु की अनेक जैन प्रतिमाएं भी हैं ये कुषाण काल से लेकर मध्यकाल तक की हैं।

बनारस में 'भदैनी जैन घाट' नाम से एक स्थान है जो भगवान सुपार्श्वनाथ का जन्मस्थान माना जाता है। यहाँ आजकल स्याद्वाद महाविद्यालय नामक प्रसिद्ध शिक्षण संस्था है। इस भवन के ऊपर भगवान सुपार्श्वनाथ का मंदिर है। यह गंगा तट पर अवस्थित है, दृश्य अत्यंत सुन्दर है। मंदिर छोटा ही है किन्तु शिखरबद्ध है।

भगवान पार्श्वनाथ का जन्मस्थल वर्तमान के भेलूपुर मोहल्ले को माना जाता है। उनके जन्मस्थान पर बहुत विशाल सुन्दर मंदिर बना हुआ है। उसी कम्पाउन्ड के भीतर धर्मशाला भी बनी हुई है। जिसमें सभी दिगम्बर जैन बंधुओं के ठहरने की समुचित व्यवस्था है। भेलूपुर में एक और दिगम्बर जैन मंदिर भी है उसमें मूलनायक पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा है।

हिन्दुओं की मान्यतानुसार अयोध्या, मथुरा, हरिद्वार, काशी, अवन्ति, उज्जयिनी और द्वारका ये सात महापुरियाँ हैं इनमें काशी मुख्य मानी गई है। "काश्यां हि

मरणान्मुक्तिः" यह हिन्दू शास्त्रों का वाक्य है।

बनारस सहस्त्रों वर्षों से विद्या का केन्द्र रहा है। यहाँ भारतीय वाङ्मय-दर्शन और साहित्य के अध्ययन-अध्यापन की प्राचीन परम्परा आज तक सुरक्षित है।

दिल्ली से कुण्डलपुर (नालंदा) की ओर संघ के मंगल विहार के मध्य पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का १९ नवंबर २००२ को बनारस में पदार्पण हुआ। वहाँ लगभग १ सप्ताह प्रवास के मध्य "बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय" में प्रथम बार जैन साधुओं के मंगल प्रवचन का कार्यक्रम भी हुआ। जिसमें बी.एच.यू. तथा डा. सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपतियों सहित अनेक वरिष्ठ प्रवक्ताओं ने पूज्य माताजी की संस्कृत भाषाजनित प्रतिभाशक्ति का कोटिशः अभिनंदन किया तथा अपने विश्वविद्यालयों में दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर द्वारा प्रदत्त साहित्य को ससम्मान विराजमान किया।

तीर्थंकरद्वय की उस पावन जन्मभूमि वाराणसी तीर्थ को शत-शत नमन।

तीर्थंकर चन्द्रप्रभ जन्मभूमि चन्द्रपुरी तीर्थ का परिचय –

गंगा के सुरम्य तट पर स्थित जैनधर्म के आठवें तीर्थंकर चन्द्रप्रभ भगवान की जन्मभूमि चन्द्रपुरी वाराणसी से लगभग २४ किमी. दूर है। यहाँ की वन्दना से असीम आनन्दानुभूति होती है। यहाँ चन्द्रप्रभ तीर्थंकर के गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान ये चार कल्याणक हुए थे इसलिए यह अत्यन्त प्राचीन तीर्थस्थान माना जाता है।

यहाँ एक प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर है एवं निकट में ही एक श्वेताम्बर जैन मंदिरहै। दिगम्बर जैन मंदिर दूसरी मंजिल पर निर्मित है तथा इसके चारों ओर पुरानी धर्मशाला भी है।

मंदिर में गर्भगृह के द्वार पर इधर-उधर आलों में "विजय यक्ष" और अष्टभुजी यक्षिणी "ज्वालामालिनी" की मूर्तियाँ विराजमान हैं।

गंगा के तट पर स्थित होने के कारण इस मंदिर का विहंगम दृश्य अत्यन्त मनोहारी है। किंतु इस तीर्थ की वीरानियत देखकर मन अत्यन्त दुखी हो जाता है, इसके जीर्णोद्धार एवं विकास की अत्यन्त आवश्यकता है।

चन्द्रपुरी तीर्थ बनारस और गाजीपुर मार्ग पर स्थित है। इस पावन तीर्थ को शतशत नमन।

तीर्थंकर श्रेयांसनाथ जन्मभूमि सिंहपुरी तीर्थ का परिचय –

सिंहपुरी वाराणसी जिले में वाराणसी से सड़कमार्ग द्वारा ६ किमी. दूर उत्तर में अवस्थित है। भगवान श्रेयांसनाथ तीर्थंकर के जन्म एवं चार कल्याणकों के कारण यह प्रागैतिहासिक काल से जैन तीर्थ रहा है। यहाँ उनके गर्भ, जन्म, दीक्षा और केवलज्ञान ये चार कल्याणक हुए थे। विद्वानों का मत है कि तीर्थंकर श्रेयाँसनाथ जी का जन्म स्थान होने के कारण ही इस स्थान का नाम 'सारनाथ' पड़ गया है।

सारनाथ में भगवान श्रेयाँसनाथ का एक प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर है। मंदिर के गर्भगृह में तीर्थंकर श्रेयांसनाथ जी की ढाई फिट ऊँची श्याम वर्ण की मनोज्ञ प्रतिमा विराजमान है उसी वेदी में आगे एक छोटी श्वेतवर्ण की श्रेयांसनाथ की प्रतिमा है। भगवान की वेदी अत्यन्त कलापूर्ण है। मुख्यवेदी के बगल में नन्दीश्वर जिनालय का फलक है जिसमें ६० प्रतिमाएँ बनी हुई हैं ये भूगर्भ से प्राप्त हुई थीं।

मंदिर के कम्पाउन्ड से बाहर भारत सरकार की ओर से पुष्पोद्यान बना है। यह सारी भूमि पहले दिगम्बर जैन मंदिर की थी किन्तु समाज की लापरवाही एवं असावधानी के कारण इस विशाल भूमि पर अब सरकारी अधिकार हो गया है।

जैन मंदिर के निकट ही १०३ फिट ऊँचा एक स्तूप है, इसे सम्राट अशोक द्वारा निर्मापित कहा जाता है। भगवान श्रेयाँसनाथ की जन्मनगरी होने के कारण सम्राट् ने भगवान की स्मृति में इसे निर्मित कराया होगा यह मान्यता भी प्रचलित है। स्तूप के ठीक सामने सिंहद्वार बना हुआ है जिसके दोनों स्तम्भों पर सिंहचतुष्क बना हुआ है। सिंहों के नीचे धर्मचक्र है जिसके दाईं ओर बैल और घोड़े की मूर्तियाँ अंकित हैं द्वार का आकार भी बड़ा कलापूर्ण है। लोक में यह मान्यता है कि इसी स्तंभ की सिंहत्रयी को भारत सरकार ने राजचिन्ह के रूप में मान्यता प्रदान की है।

पौराणिक मान्यतानुसार इस स्थान पर ग्यारहवें तीर्थंकर श्रेयांसनाथ ने धर्मचक्र प्रवर्तन किया था। यहाँ पर देवों ने उनके समवसरण की रचना की थी।

सारनाथ वर्तमान में महात्मा बुद्ध की प्रथम उपदेशस्थली के रूप में जग विख्यात है एवं यहाँ बुद्ध के अनेकों मंदिर आदि हैं। यहाँ पुरातत्त्व की खुदाई में अनेकों बुद्ध संबंधी अवशेष एवं जैन मूतियाँ इत्यादि प्राप्त हुईं जो यहाँ के संग्रहालय में सुरक्षित हैं।

सारनाथ अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटन स्थल है अतः जैनधर्म के प्रचार-प्रसार हेतु भी यह अत्यन्त उपयोगी स्थल हो सकता है। काशी के जैन समाज की भावनाओं के आधार पर सारनाथ के प्रांगण में सवा ग्यारह फुट ऊँची पद्मासन चमत्कारिक प्रतिमा भगवान श्रेयांसनाथ की स्थापित हो चुकी हैं। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने नवंबर २००२ में सारनाथ पदार्पण के अवसर पर इस परिसर का नाम "भगवान श्रेयांसनाथधर्मस्थल" प्रदान किया है।

तीर्थंकर श्रेयांसनाथ जी का मंदिर अत्यन्त रमणीक स्थान पर स्थित है मंदिर के चारों तरफ एवं बाहर की हरियाली का दृश्य नयनाभिराम है। वैसे यहाँ ठहरने के लिए जैन धर्मशाला बनी हुई है फिर भी अधिकतर सिंहपुरी की वंदना करने आने वाले यात्री बनारस में ही रुकते हैं। बनारस से टैम्पो, बस आदि समय-समय पर आसानी से उपलब्ध रहते हैं। सिंहपुरी की यात्रा के साथ ही "चन्द्रपुरी" तीर्थ की यात्रा भी लोग करते हैं अतः एक दिन में दोनों तीर्थों की वंदना हो जाती है।

तीर्थंकर पार्श्वनाथ

लेखिका-गणिनी ज्ञानमती

इसी जम्बूद्वीप के दक्षिण भरत क्षेत्र में एक सुरम्य नाम का बड़ा भारी देश है। उसके पोदनपुर नगर में अतिशय धर्मात्मा अरविन्द राजा राज्य करते थे। उसी नगर में विश्वभूति ब्राह्मण की अनुन्धरी ब्राह्मणी से उत्पन्न हुए कमठ और मरुभूति नाम के दो पुत्र थे जोकि क्रमशः विष और अमृत से बनाये हुए के समान मालूम पड़ते थे। कमठ की स्त्री का नाम वरुणा तथा मरुभूति की स्त्री का नाम वसुन्धरा था। ये दोनों ही राजा के मन्त्री थे।

एक समय किसी राज्यकार्य से मरुभूति बाहर गया था तब कमठ मरुभूति की स्त्री वसुन्धरा के साथ व्यभिचारी बन गया। राजा अरविंद को यह बात पता चलते ही उन्होंने उस कमठ को दण्डित करके देश से निकाल दिया। वह कमठ भी मानभंग से दुःखी होकर किसी तापस आश्रम में जाकर हाथ में पत्थर की शिला लेकर कुतप करने लगा। भाई के प्रेम के वशीभूत हो मरुभूति भी कमठ को ढूंढ़ता हुआ उधर चल पड़ा। उसे आते देख क्रोध के आवेश में आकर कमठ ने वह हाथ की शिला उसके सिर पर पटक दी जिससे मरुभूति मरकर सल्लकी वन में वज्रघोष नाम का हाथी हो गया।

किसी समय अरविन्द ने विरक्त होकर राज्य छोड़ दिया और संयम धारणकर सब संघ की वंदना के लिये प्रस्थान किया। चलते-चलते वे उसी वन में पहुँचकर सामायिक के समय प्रतिमायोग से विराजमान हो गये। वह हाथी संघ में हाहाकार करता हुआ अरविन्द महाराज के सन्मुख आकर मारने के लिए दौड़ा, तत्क्षण ही उनके वक्षस्थल में श्री वत्स के चिन्ह को देखते ही उसे पूर्व भव संबंध का स्मरण हो आया तब वह पश्चाताप से शांत होता हुआ चुपचाप खड़ा रहा। अनंतर अरविन्द मुनिराज ने उसे धर्मोपदेश देकर श्रावक के व्रत ग्रहण करा दिये।

उस समय से वह हाथी पाप से डर कर दूसरे हाथियों द्वारा तोड़ी हुई वृक्ष की शाखाओं और सूखे पत्तों को खाने लगा। पत्थरों के गिरने से अथवा हाथियों के समूह के संघटन से जो पानी प्रासुक हो जाता था उसे ही वह पीता था तथा प्रोषधोपवास के बाद पारणा करता था। इस प्रकार चिरकाल तक महान तपश्चरण करता हुआ वह हाथी अत्यन्त दुर्बल हो गया। किसी दिन वह हाथी पानी पीने के लिए वेगवती नदी के किनारे गया और कीचड़ में गिरकर फँस गया, निकल नहीं सका। वहाँ पर दुराचारी कमठ का जीव मरकर कुक्कुट सर्प हुआ था उसने पूर्व वैर के संस्कार से उसे काट खाया जिससे वह हाथी महामंत्र का स्मरण करते हुए मरकर बारहवें स्वर्ग में देव हो गया। इधर वह सर्प पाप से मरकर तीसरे नरक चलागया।

जंबूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में पुष्कलावती देश है उसके विजयार्ध पर्वत पर त्रिलोकोत्तम नगर में राजा विद्युत्गति राज्य करते थे। वह देव का जीव वहाँ से च्युत होकर

राजा की विद्युन्माला रानी से रश्मिवेग नाम का पुत्र हो गया। रश्मिवेग ने युवावस्था में समाधिगुप्त मुनिराज के पास दीक्षा लेकर महासर्वतोभद्र आदि श्रेष्ठ उपवास किये। किसी समय हिमगिरि पर्वत की गुफा में योग धारण कर विराजमान थे कि कुक्कुट सर्प का जीव जो नरक से निकल कर अजगर हुआ था उसने निगल लिया। मुनि का जीव मरकर सोलहवें स्वर्ग में देव हुआ और कालांतर में अजगर मरकर छठे नरक चला गया।

जंबूद्वीप के पूर्व विदेह सम्बन्धी पद्मादेश में अश्वपुर नगर है। वहाँ के राजा वज्रवीर्य और रानी विजया के वह स्वर्ग का देव मरकर वज्रनाभि नाम का पुत्र हुआ। वह पुण्यशाली वज्रनाभि चक्रवर्ती के पद का भोक्ता हो गया, अनंतर किसी समय विरक्त होकर साम्राज्य वैभव का त्यागकर क्षेमंकर गुरु के समीप जैनेश्वरी दीक्षा ले ली। कमठ का जीव, जो कि अजगर की पर्याय में मरकर छठे नरक गया था वह कुरंग नाम का भील हो गया था। किसी दिन तपस्वी चक्रवर्ती वन में आतापन योग में विराजमान थे, उन्हें देखकर उस भील का वैर भड़क उठा, उसने मुनिराज पर भयंकर उपसर्ग किए। मुनिराज आराधनाओं की आराधना से मरण कर मध्यम ग्रैवेयक में श्रेष्ठ अहमिन्द्र हो गए तथा वह पापी भील आयु पूरी करके पाप के भार से पुनः नरक चला गया।

जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र में कौशलदेश सम्बन्धी अयोध्या नगरी में काश्यपगोत्री इक्ष्वाकुवंशी राजा वज्रबाहु राज्य करते थे। उनकी रानी प्रभंकरी थी वह अहमिन्द्र च्युत होकर रानी के गर्भ से आनंद नाम का आनंददायी पुत्र हो गया। वह बड़ा होकर मंडलेश्वर राजा हुआ। किसी दिन आनंद राजा ने महामंत्री के कहने से आष्टान्हिक महापूजा कराई जिसे देखने के लिए विपुलमति नाम के मुनिराज पधारे। आनंदराजा ने उनकी वंदना पूजा आदि करके उनसे पूछा कि हे भगवन्! जिनेन्द्र प्रतिमा अचेतन है तो उसकी पूजा से पुण्यबंध कैसे होता है? मुनिराज ने कहा यद्यपि प्रतिमा अचेतन है तो भी महान पुण्य का कारण है जैसे चिंतामणि रत्न, कल्पवृक्ष आदि अचेतन होकर मनचिंतित और मनचाहे फल देते हैं वैसे ही प्रतिमाओं की वंदना पूजा आदि से जो शुभ परिणाम होते हैं उनसे सातिशय पुण्य बंध हो जाता है इत्यादि प्रकार से वीतराग प्रतिमा का वर्णन करते हुए मुनिराज ने राजा के सामने तीन लोक सम्बन्धी अकृत्रिम चैत्यालयों का वर्णन करना शुरू किया। उसमें प्रारम्भ में ही सूर्य के विमान में स्थित जिनमंदिर की विभूति का अच्छी तरह वर्णन किया। उस असाधारण विभूति को सुनकर राजा आनन्द को बहुत ही श्रद्धा हो गई। उस दिन से वह प्रतिदिन हाथ जोड़कर मस्तक झुकाकर सूर्य विमान में स्थित जिनप्रतिमाओं की स्तुति करने लगा। उसने कारीगरों द्वारा मणि और सुवर्ण का एक सूर्य विमान बनवाकर उसके भीतर जिनमन्दिर बनवाया। अनन्तर शास्त्रोक्त विधि से आष्टान्हिक, चतुर्मुख, रथावर्त,

सर्वतोभद्र और कल्पवृक्ष इन नाम वाली पूजाओं का 'अनुष्ठान' किया।

"उस राजा को इस तरह सूर्य की पूजा करते देखकर उसकी प्रामाणिकता से अन्य लोग भी स्वयं भक्तिपूर्वक सूर्यमंडल की स्तुति करने लगे। आचार्य कहते हैं कि इस लोक में उसी समय से सूर्य की उपासना चल पड़ी है।"

किसी दिन आनन्द राजा ने अपने सिर पर एक सफेद बाल देखा तत्क्षण विरक्त होकर पुत्र को राज्य वैभव देकर समुद्रगुप्त मुनिराज के पास अनेक राजाओं के साथ दीक्षित हो गये। उन्होंने ग्यारह अंगों का अध्ययन किया और सोलहकारण भावनाओं के चिंतवन से तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर लिया। आयु के अंत समय वे धीर-वीर शांतमना मुनिराज प्रायोपगमन संन्यास लेकर ध्यान में लीन थे। पूर्व जन्म के कमठ का जीव नरक से निकलकर वहीं सिंह हुआ था। सो उसने आकर उन मुनि का कण्ठ पकड़ लिया। सिंहकृत उपसर्ग से विचलित नहीं होने वाले वे मुनिराज मरणकर अच्युत (सोलहवें) स्वर्ग के प्राणत नामक विमान में इन्द्र हो गए। वहाँ पर उनकी आयु बीस सागर की थी, साढ़े तीन हाथ ऊँचा शरीर था। वे वहाँ दिव्य सुखों का अनुभव कर रहे थे। उधर सिंह का जीव भी आयु पूरी करके मरकर नरक चला गया और वहाँ के भयंकर दुःखों का चिरकाल तक अनुभव करता रहा।

गर्भावतार—

इस जंबूद्वीप के भरत क्षेत्र सम्बन्धी काशी देश में बनारस नाम का एक नगर है। उसमें काश्यप गोत्री राजा अश्वसेन अपरनाम विश्वसेन राज्य करते थे। उनकी रानी का नाम वामा देवी अपरनाम ब्राह्मी था। जब उन सोलहवें स्वर्ग के इन्द्र की आयु छह मास की अवशेष रह गई थी तब इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने माता के आँगन में रत्नों की धारा बरसाना शुरू कर दी थी। रानी वामा देवी ने सोलहस्वप्नपूर्वक वैशाख कृष्णा द्वितीया के दिन इन्द्र के जीव को गर्भ में धारण किया था।

नवमास पूर्ण होने पर पौष कृष्णा एकादशी के दिन पुत्र का जन्म हुआ था। इन्द्रादि देवों ने सुमेरु पर्वत पर ले जाकर तीर्थंकर शिशु का जन्माभिषेक करके 'पार्श्वनाथ' यह नामकरण किया था। श्री नेमिनाथ के बाद तिरासी हजार सात सौ पचास वर्ष बीत जाने पर इनका जन्म हुआ था। इनकी आयु सौ वर्ष की थी जोकि इसी अंतराल में सम्मिलित है। प्रभु की कांति हरितवर्ण की एवं शरीर की ऊँचाई नौ हाथ प्रमाण थी। ये उग्रवंशी थे।

सोलह वर्ष बाद नवयौवन से युक्त भगवान किसी समय क्रीडा के लिये अपनी सेना के साथ नगर के बाहर गये। कमठ का जीव जो कि सिंह पर्याय से नरक गया था वह वहाँ से आकर महीपाल नगर का महीपाल नाम का राजा हुआ था। उसी की पुत्री वामा देवी भगवान पार्श्वनाथ की माता थीं। यह राजा (भगवान के नाना) किसी समय अपनी पत्नी के वियोग में

तपस्वी होकर वहीं आश्रम के पास वन में पंचाग्नियों के बीच में बैठा तपश्चरण कर रहा था। देवों द्वारा पूज्य भगवान उसके पास जाकर उसे नमस्कार किये बिना ही खड़े हो गये। यह देखकर वह खोटा साधु क्रोध से युक्त हो गया और सोचने लगा "मैं कुलीन हूँ, तपोवृद्ध हूँ और इसका नाना हूँ" फिर भी इस अज्ञानी कुमार ने अहंकारवश मुझे नमस्कार नहीं किया है, क्षुभित हो उसने अग्नि में लकड़ियों को डालने के लिए पड़ी हुई लकड़ी को काटने हेतु अपना फरसा उठाया, इतने में ही अवधिज्ञानी भगवान पार्श्वनाथ ने कहा, "इसे मत काटो" इसमें जीव हैं किन्तु मना करने पर भी उसने लकड़ी काट ही डाली, तत्क्षण ही उसके भीतर रहने वाले सर्प और सर्पिणी निकल पड़े और घायल हो जाने से छटपटाने लगे।

यह देखकर प्रभु के साथ स्थित सुभौमकुमार ने कहा कि तू अहंकारवश यह कुतप करके ताप का ही आस्रव कर रहा है। सुभौम के वचन सुन तपस्वी क्रुधित होकर अपने तपश्चरण की महत्ता प्रकट करने लगा। तब सुभौमकुमार ने अनेक युक्तियों से उसे समझाया कि सच्चे देव, शास्त्र और गुरु के सिवाय कोई हितकारी नहीं है। जिनधर्म में प्रणीत सच्चे तपश्चरण से ही कर्म निर्जरा होती है। यह मिथ्यातप, जीव हिंसा सहित होने से कुतप ही है। यद्यपि वह तापसी समझ तो गया किन्तु पूर्व बैर का संस्कार होने से अपने पक्ष के अनुराग से अथवा दुःखमय संसार के कारण से अथवा स्वभाव से ही दुष्ट होने से उसने स्वीकार नहीं किया प्रत्युत् यह सुभौमकुमार अहंकारी होकर मेरा तिरस्कार कर रहा है ऐसा समझ वह भगवान पार्श्वनाथ पर अधिक क्रोध करने लगा। इसी शल्य से मरकर 'शम्बर' नाम का ज्योतिषी देव हो गया।

इधर सर्प और सर्पिणी पार्श्व कुमार के उपदेश से शांतभाव को प्राप्त हुए तथा मरकर बड़े ही वैभवशाली धरणेन्द्र और पद्मावती हो गये।

अनंतर भगवान जब तीस वर्ष के हो गये तब एक दिन अयोध्या के राजा जयसेन ने उत्तम घोड़ा आदि की भेंट के साथ अपना दूत भगवान पार्श्वनाथ के समीप भेजा। भगवान ने भेंट लेकर उस दूत से अयोध्या की विभूति पूछी। उत्तर में दूत ने सबसे पहले भगवान ऋषभदेव का वर्णन किया पश्चात् अयोध्या का हाल कहा। उसी समय ऋषभदेव के सदृश अपने को तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध हुआ है, ऐसा सोचते हुए भगवान गृहवास से पूर्ण विरक्त हो गये और लौकांतिक देवों द्वारा पूजा को प्राप्त हुए। प्रभु देवों द्वारा लाई गई विमला नाम की पालकी पर बैठकर अश्ववन में पहुँच गये। वहाँ तेला का नियम लेकर पौष कृष्णा एकादशी के दिन प्रातः काल के समय सिद्ध भगवान को नमस्कार करके प्रभु तीन सौ राजाओं के साथ दीक्षित हो गये।

पारणा के दिन गुल्मखेट नगर के धन्य नामक राजा ने अष्ट मंगलद्रव्यों से प्रभु का पड़गाहन कर आहारदान देकर पंचाश्चर्य प्राप्त कर लिये। छद्मस्थ अवस्था के चार

मास व्यतीत हो जाने पर भगवान अश्ववन में पहुँचकर देवदारु वृक्ष के नीचे विराजमान होकर ध्यान में लीन हो गये। इसी समय कमठ का जीव शम्बर ज्योतिषी आकाशमार्ग से जा रहा था, अकस्मात् उसका विमान रुक गया, उसे विभंगावधि से पूर्वभव का बैर बंध स्पष्ट दिखने लगा। फिर क्या था, क्रोधवश उसने महागर्जना, महावृष्टि, भयंकर वायु आदि से महा उपसर्ग करना प्रारम्भ कर दिया, बड़े बड़े पहाड़ तक लाकर समीप में गिराये, इस प्रकार उसने सात दिन तक लगातार भयंकर उपसर्ग किया।

अवधिज्ञान से यह उपसर्ग जानकर धरणेन्द्र अपनी भार्या पद्मावती के साथ पृथ्वी तल से बाहर निकला। धरणेन्द्र और पद्मावती दोनों ने भगवान को सब ओर से घेर कर अपने फणाओं के ऊपर उठा लिया और वज्रमय छत्र तान कर प्रभु का उपसर्ग दूर किया। आचार्य कहते हैं देखो! स्वभाव से ही क्रूर प्राणी इन सर्प सर्पिणी ने अपने ऊपर किये गये उपकार को याद रखा सो ठीक ही है क्योंकि सज्जन पुरुष अपने ऊपर किये हुए उपकार को कभी नहीं भूलते हैं।तभी से वह स्थल ''अहिच्छत्र'' नाम से प्रसिद्ध हो गया।

तदनंतर ध्यान के प्रभाव से प्रभु का मोहनीय कर्म क्षीण हो गया इसलिए बैरी कमठ कृत सब उपसर्ग दूर हो गया। मुनिराज पार्श्वनाथ ने चैत्र कृष्णा चतुर्थी के दिन प्रातःकाल के समय विशाखा नक्षत्र में लोकालोकप्रकाशी केवलज्ञान को प्राप्त कर लिया। उसी समय इन्द्रों ने आकर समवसरण की रचना करके केवलज्ञान की पूजा की। शंबर नाम का देव भी काललब्धि पाकर उसी समय शांत हो गया और उसने सम्यग्दर्शन प्राप्त कर लिया। यह देख, उस वन में रहने वाले सात सौ तपस्वियों ने मिथ्यादर्शन छोड़कर संयम धारण कर लिया, सभी शुद्ध सम्यग्दृष्टि हो गये और बड़े आदर से प्रदक्षिणा देकर भगवान की स्तुति भक्ति की। आचार्य कहते हैं कि पापी कमठ के जीव का कहां तो निष्कारण वैर और कहां ऐसी पार्श्वनाथ की शांति! इसलिए संसार के दुःखों से भयभीत प्राणियों को वैर विरोध का सर्वथा त्याग कर देना चाहिए।

भगवान पार्श्वनाथ के समवसरण में स्वयंभू को आदि लेकर दस गणधर थे, सोलह हजार मुनिराज, सुलोचना को आदि लेकर छत्तीस हजार आर्यिकायें, एक लाख श्रावक और तीन लाख श्राविकायें थीं। इस प्रकार बारह सभाओं को धर्मोपदेश देते हुए भगवान ने पाँच मास कम सत्तर वर्ष तक विहार किया। अंत में आयु का एक माह शेष रहने पर विहार बंद हो गया। प्रभु पार्श्वनाथ सम्मेदाचल के स्वर्णभद्र कूट पर छत्तीस मुनियों के साथ प्रतिमायोग से विराजमान हो गये। श्रावण शुक्ला सप्तमी के दिन प्रातःकाल के समय विशाखा नक्षत्र में सिद्धपद को प्राप्त हो गये। इन्द्रों ने आकर मोक्ष कल्याणक उत्सव मनाया। ऐसे पार्श्वनाथ भगवान हमें भी सम्पूर्ण प्रकार के उपसर्गों को सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

नवदेवता पूजन

गीता छन्द

अरिहंत सिद्धाचार्य पाठक, साधु त्रिभुवन वंद्य हैं।
जिनधर्म जिनआगम जिनेश्वरमूर्ति जिनगृह वंद्य हैं।।
नव देवता ये मान्य जग में, हम सदा अर्चा करें।
आह्वान कर थापें यहां मन में अतुल श्रद्धा धरें।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालय समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालय समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालय समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टक

गंगानदी का नीर निर्मल, बाह्य मल धोवे सदा।
अंतर मलों के क्षालने को नीर से पूजूँ मुदा।।
नवदेवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें।।१।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर मिश्रित गंध चंदन, देह ताप निवारता।
तुम पाद पंकज पूजते, मन ताप तुरतहिं वारता।।नव०।।२।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीरोदधी के फेन सम सित तंदुलों को लायके।
उत्तम अखंडित सौख्य हेतु, पुंज नव सुचढ़ायके।।
नवदेवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें।।३।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पा चमेली केवड़ा, नाना सुगन्धित ले लिये।
भव के विजेता आपको, पूजत सुमन अर्पण किये।।नव.।।४।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पायस मधुर पकवान मोदक, आदि को भर थाल में।
निज आत्म अमृत सौख्य हेतु पूजहूँ नत भाल मैं।।नव.।।५।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर ज्योति जगमगे दीपक लिया निज हाथ में।
तुम आरती तम वारती, पाऊँ सुज्ञान प्रकाश मैं।।नव.।।६।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंधधूप अनूप सुरभित, अग्नि में खेऊँ सदा।
निज आत्मगुण सौरभ उठे, हों कर्म सब मुझसे विदा।।नव.।।७।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर अमरख आम्र अमृत, फल भराऊँ थाल में।
उत्तम अनूपम मोक्ष फल के, हेतु पूजूँ आज मैं।।नव.।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत पुष्प चरु दीपक सुधूप फलार्घ्य ले।
वर रत्नत्रय निधि लाभ यह बस अर्घ्य से पूजत मिले।।
नवदेवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **जलधारा से नित्य मैं, जग की शांति हेत।**
नवदेवों को पूजहूँ, श्रद्धा भक्ति समेत।।१०।।

शांतये शांतिधारा।

नाना विध के सुमन ले, मन में बहु हरषाय।
मैं पूजूँ नव देवता, पुष्पांजली चढ़ाय।।११।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य-ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो नमः। (९, २७ या १०८ बार)

जयमाला

सोरठा- **चिच्चिंतामणिरत्न, तीन लोक में श्रेष्ठ हो।**
गाऊँ गुणमणिमाल जयवंते वर्तो सदा।।१।।

(चाल-हे दीनबन्धु श्रीपति.....)

जय जय श्री अरिहंत देवदेव हमारे।
जय घातिया को घात सकल जंतु उबारे।।
जय जय प्रसिद्ध सिद्ध की मैं वंदना करूँ।
जय अष्ट कर्ममुक्त की मैं अर्चना करूँ।।२।।
आचार्य देव गुण छत्तीस धार रहे हैं।
दीक्षादि दे असंख्य भव्य तार रहे हैं।।
जैवंत उपाध्याय गुरु ज्ञान के धनी।
सन्मार्ग के उपदेश की वर्षा करें घनी।।३।।

जय साधु अठाईस गुणों को धरें सदा।
निज आत्मा की साधना से च्युत न हों कदा।।
ये पंचपरमदेव सदा वंद्य हमारे।
संसार विषम सिंधु से हमको भी उबारें।।४।।
जिनधर्म चक्र सर्वदा चलता ही रहेगा।
जो इसकी शरण ले वो सुलझता ही रहेगा।।
जिन की ध्वनी पियूष का जो पान करेंगे।
भव रोग दूर कर वे मुक्ति कांत बनेंगे।।५।।
जिन चैत्य की जो वंदना त्रिकाल करे हैं।
वे चित्स्वरूप नित्य आत्म लाभ करे हैं।।
कृत्रिम व अकृत्रिम जिनालयों को जो भजें।
वे कर्मशत्रु जीत शिवालय में जा बसें।।६।।
नव देवताओं की जो नित आराधना करें।
वे मृत्युराज की भी तो विराधना करें।।
मैं कर्मशत्रु जीतने के हेतु ही जजूँ।
सम्पूर्ण ''ज्ञानमती'' सिद्धि हेतु ही भजूँ।।७।।

दोहा- **नवदेवों को भक्तिवश, कोटि कोटि प्रणाम।**
भक्ती का फल मैं चहूँ, निजपद में विश्राम।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो जयमाला अर्घ्यं.....।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

गीता छंद

जो भव्य श्रद्धाभक्ति से, नवदेवता पूजा करें।
वे सब अमंगल दोष हर, सुख शांति में झूला करें।।
नवनिधि अतुल भंडार लें, फिर मोक्ष सुख भी पावते।
सुखसिंधु में हो मग्न फिर, यहां पर कभी न आवते।।९।।

इत्याशीर्वादः।

कालसर्पयोग निवारक

श्री पार्श्वनाथ विधान

श्रीपार्श्वनाथ वंदना

(उपजातिछंदः)

कल्याणकल्पद्रुमसारभूतं, चिंतामणिं चिंतितदानदक्षम्।
श्रीपार्श्वनाथस्य सुपादपद्मं, नमामि भक्त्या परया मुदा च।।१।।

ध्याने स्थितो यो बहिरंतरंगं, त्यक्त्वोपधिं तत्र तदा जिनस्य।
मातामहः स्यात् कमठासुरोऽसौ, अभूत् कुदेवः कुतपोऽभिरेव।।२।।

रुद्धं विमानं पथि गच्छतो हा! ध्यानस्थपार्श्वं प्रविलोक्य रुष्टवा।
शत्रुं च मत्वा कृतभीमरूपो, धाराप्रपातैः स चकार वृष्टिं।।३।।

चकास्ति विद्युत् दशदिक्षु पिंगा, वात्या महद्ध्वांतमयं च कालं।
घनाघनो गर्जति घोररावैः, प्रचंडवातैः परिमूलयन् द्रून्।।४।।

परीषहैर्वातकृतैस्तदासौ, महामना धीरगभीरपार्श्वः।
अकम्पचित्तः कनकाचलो वै, तं पार्श्वनाथं त्रिविधं प्रवंदे।।५।।

पुण्यप्रभावाद् विचलासनाच्च, यातः फणीन्द्रश्चकितः सभार्यः।
फणातपत्रैरुपसर्गकाले, भक्तिं व्यधात् यस्य नमोऽस्तु तस्मै।।६।।

श्रीपार्श्वनाथः स्वपरात्मविज्ञः, श्रेणीं श्रितः स्वात्मजशुक्लयोगैः।
घातीनि हत्वा जगदेकसूर्यः, कैवल्यमाप्नोत् तमहं स्तवीमि।।७।।

माणिक्यगारुत्मणिरत्नगर्भैः, वैडूर्यमुक्तामणिहीरकाद्यैः।
शक्राज्ञया वृत्तसभां जिनस्य, आकाशमध्ये व्यतनोद् धनेशः।।८।।

स्तंभांतमानादिविशालकायाः, सरांसि पुष्पस्य सुवाटिका स्युः।
प्राकारतुंगास्त्रयसालशोभाः, वाप्यादयः स्वच्छजलाः सुरम्याः।।९।।

क्षिपंति धूपस्य घटेषु देवाः, सौगंध्यधूपं सुरभिः समंतात्।
सुतोरणाद्या ध्वजपंक्तयश्च, मयूरहंसादिकचिह्नयुक्ताः ।।१०।।

भामंडले सप्तभवान् सुभव्याः, वापीजलेऽपि प्रविलोकयंति।
सर्वाः सुसंपत्नधयोऽपि विश्वे, रत्नानि सर्वाणि बभुश्च तत्र।।११।।

द्वारेषु देवाः किल रक्षकाः स्युः, सद्दृष्टिमद्भिःसह रज्यमानाः।
मध्ये त्रिसालस्य हि गंधकुट्यां, सिंहासनस्योपरि देवदेवः।।१२।।

विराजते रत्नमणिप्ररोचिः, कंजासने या चतुरंगुलास्पृक्।
छत्रत्रयं चंद्रनिभं प्रवक्ति, ''त्रैलोक्यनाथोऽय'' मिति स्तुवे तं।।१३।।

देवा व्यधुर्दुंदुभिनादमुच्चैः, त्रैलोक्यजंतुं प्रति सूचयंतं।
जयारवं कल्पतरोश्च वृष्टिं, गंधोदकैश्च प्रणमाम्यहं तं।।१४।।

अशोकवृक्षो जनशोकहारी, वियोगरोगार्तिविनाशकारी।
सुवीज्यमानाश्चमरीरुहाश्च, भांतीव ते निर्झरवारिधाराः।।१५।।

भाश्चक्रकांतिः प्रभुदेहदीप्त्या, विडंबयत्कोटिरविप्रभासौ।
सर्वार्थभाषामयदिव्यवाक् ते, त्रिकालमाविर्भवति स्तुवे त्वां।।१६।।

देवा मनुष्याः पशु-पक्षिवृंदं, श्रीपार्श्वमानम्य मिथश्च सर्वे।
विरोधभावं परिहृत्य नित्यं, तिष्ठंति प्रीत्या शुभभावनातः।।१७।।

दिशोऽमलाः स्वच्छसरांसि भांति, षडर्तुजातास्तरवो लताद्याः।
शाल्यादिसस्यान्यभवन् स्वतश्च, जीवस्य हिंसा न तदा कदाचित् ।।१८।।

केशा नखाः वृद्धिमगु प्रभोर्न, दृग्निर्निमेषे चतुरास्यता च।
तनुश्च ते दर्पणवत् चकास्ति, वंदे तमेतेऽतिशयाश्च यस्य।।१९।।

सेन्द्रा नरेन्द्राश्च तथा फणीन्द्राः, नत्वा जिनेन्द्रं गणिनं च भक्त्या।
तत्र स्थिता धर्मसुधां पिबन्तः, संतर्पितास्तानुपदिश्य पार्श्वः।।२०।।

विहारकाले शुभमग्रगामि, श्रीधर्मचक्रं विबभौ विभोस्ते।
सुहेमपद्मेषु विभुश्च पादौ, धृत्वांतरिक्षे व्यहरत् स्तुवे तं।।२१।।
नष्टोपसर्गे रविकेवलोत्थे, जातं त्वहिक्षेत्रमिदं सुतीर्थं।
क्षेत्रं पवित्रं जगति प्रसिद्धं, भक्त्या सदा भव्यजनाः स्तुवंति।।२२।।

श्रीपार्श्वनाथाय नमोऽस्तु तुभ्यं।
दुःखार्तिनाशाय नमोऽस्तु तुभ्यं।।
अभीप्सितार्थाय नमोऽस्तु तुभ्यं।
त्रैलोक्यनाथाय नमोऽस्तु तुभ्यं।।२३।।

शार्दूलविक्रीडित छंद

यो लोकांतर्भूतवस्तुसकलं नक्षत्रवत् लोकते।
यो जित्वा ह्यु पसर्गकं ''जिन'' इति प्रख्यश्च कर्माण्यपि।।
वामानंदन एष एव भगवान् लोकैककल्पद्रुमः।
भूयात् मे त्वरमश्वसेननृपजः श्री ''ज्ञानमत्यै'' श्रियै।।२४।।

अथ जिनयज्ञप्रतिज्ञापनाय पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

श्री पार्श्वनाथ वंदना

चौबोल छंद

जो कल्याण कल्पतरु सार-भूत चिंतामणि चिंतितदा।
श्रीपारस प्रभु पादकमल को, भक्तिभाव से नमूं मुदा।।१।।
अंतर्बहिः परिग्रह तजकर, ध्यान लीन जब खड़े प्रभो!।
कमठासुर कूतप से मरकर, तब मातामह हुआ प्रभो!।।२।।
पथ में जाता रुका विमानं, हा! ध्यानस्थ पार्श्व को लख।
क्रुधित शत्रु गिन भीमरूप धर, मूसलधार वृष्टि को कर।।३।।
विद्युत चमके दश दिश में, आंधी अँधियारी काल समान।
गरजे मेघ भयंकर वायू, वृक्ष उखाड़े शैल समान।।४।।

वायु भयंकर उपसर्गों से, महामना पारस प्रभु धीर।
अचलितमना मेरु सम पारस, त्रयविधि वंदूं महागभीर।।५।।
पुण्योदय से फणपति आसन, कंपा पद्मावति के साथ।
आकर फण का छत्र किया प्रभु-शिरपर वंदूं पारसनाथ।।६।।
स्वपरभेदवित् पारस स्वात्मज, ध्यानशुक्ल श्रेणी पर चढ़।
घात घातिया केवल पायो, त्रिभुवनसूर्य नमूं शुचि कर।।७।।
माणिकरत्न गरुत्मणि मुक्ता, हीरकमणि वैडूर्यों से।
इन्द्राज्ञा से धनपति रचियो, समवशरण गगनांगण में।।८।।
अतिऊँचे मानस्तंभों से, पुष्पवाटिका सरवर से।
परकोटे सालत्रय शोभें, वापी रम्य स्वच्छ जल से।।९।।
धूपघटों में सुरगण खेते, धूप सुगंधित चउदिश में।
तोरण ध्वजपंक्ती बहु शोभें, हंस मयूर चिह्न युत हैं।।१०।।
देखें सप्तभवों को भविजन, भामंडल वापी जल में।
नवनिधि चौदहरत्न सभी, संपत्ति वहां बहुविध शोभें।।११।।
रक्षकदेव खड़े द्वारों पर, सम्यग्दृष्टी के प्रिय हैं।
तीनसाल के मध्य गंधकुटि, सिंहासन पर प्रभु शोभें।।१२।।
रत्नमणीमय कमलासन पर, चतुरंगुल ऊपर राजें।
तीन छत्र "त्रिभुवनपति" सूचक, उन प्रभु को हम नित वंदे।।१३।।
दुंदुभि बजती त्रिभुवन जन को, सूचित करती तव जयकार।
कल्पतरु से पुष्पवृष्टि, गंधोदक वर्षा हो सुखकार।।१४।।
तरुअशोक जन शोकहरे, रोगार्ति वियोग विनाश करें।
चौंसठ चमर ढुरे निर्झरजल-सम प्रभु पर हम उन्हें नमें।।१५।।
प्रभुतनु कांती से भामंडल, दिपे कोटिरवि शशि लज्जें।
सब भाषामय दिव्यध्वनि तव, त्रिसमय प्रगटे नमूं तुम्हें।।१६।।
देव असुर नर पशु पक्षीगण, मिल पारस का कर वंदन।
वैरभाव को छोड़ परस्पर, परमप्रीति धारें सब जन।।१७।।

निर्मल दिश सब स्वच्छ सरोवर, शाली आदिक खेत फलें।
प्राणी हिंसा कभी न होती, षट् ऋतु के फल फूल खिलें।।१८।।

नख अरु केश बढ़े नहिं प्रभु के, दृग् टिमकार रहित शोभें।
दिखें चतुर्मुख तनु दर्पणवत्, इन अतिशय युत को वंदे।।१९।।

इन्द्र नरेन्द्र फणीन्द्र नमन कर, प्रभु को गणधर को भजकर।
बैठे सभा में धर्मपिपासु, प्रभु उपदेश दिया सुखकर।।२०।।

प्रभु विहार में आगे चलता, धर्मचक्र राजे सुखकर।
कनक कमल पर प्रभु पग धरते, गगन गमन करते मनहर।।२१।।

दूर हुआ उपसर्ग तुरत, कैवल्यज्ञान रवि उदित हुआ।
तीर्थ पवित्रं "अहिच्छत्र" भविजन, संस्तुत जग सिद्ध हुआ।।२२।।

नमोऽस्तु पारसनाथ! तुम्हें, दुःखार्ति विनाशि नमोऽस्तु तुम्हें।
नमोऽस्तु ईप्सित हेतु तुम्हें, हे त्रिभुवननाथ! नमोऽस्तु तुम्हें।।२३।।

जो सब त्रिभुवन की वस्तू को, इक नक्षत्र सदृश देखें।
जो उपसर्ग रु कर्मशत्रु को, जीता "जिन" इस विधि से हैं।।२४।।

अश्वसेन सुत वामानंदन, वे लोकैककल्पतरु हैं।
उन पारस प्रभु के प्रसाद से, "ज्ञानमती" श्री मम होवे।।२५।।

अथ जिनयज्ञप्रतिज्ञापनाय पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

❖❖❖

कालसर्पयोग निवारक मंत्र

ॐ ह्रीं कमठोपसर्ग विजयिने
श्री पार्श्वनाथाय नमः कालसर्पयोग निवारणं
कुरु कुरु स्वाहा ।

श्री पार्श्वनाथ पूजा

अथ स्थापना

(तर्ज–गोमटेश जय गोमटेश मम हृदय विराजो.....)

पार्श्वनाथ जय पार्श्वनाथ, मम हृदय विराजो-२
हम यही भावना भाते हैं, प्रतिक्षण ऐसी रुचि बनी रहे।
हो रसना में प्रभु नाममंत्र, पूजा में प्रीती घनी रहे।।हम०।।

हे पार्श्वनाथ आवो आवो, आह्वान आपका करते हैं।
हम भक्ति आपकी कर करके, सब दुख संकट को हरते हैं।।
प्रभु ऐसी शक्ती दे दीजे, गुण कीर्तन में मति बनी रहे।।हम०।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टक

आवो हम सब करें अर्चना, पार्श्वनाथ भगवान की।
जिनकी भक्ती से प्रगटित हो, ज्योति आतम ज्ञान की।।
।।वंदे जिनवरम्-४।।

सुरगंगा का उज्ज्वल जल ले, प्रभु चरणों त्रयधार करूँ।
पुनर्जन्म का त्रास दूर हो, इसीलिए प्रभु ध्यान धरूँ।।
भव भव तृषा मिटाने वाली, पूजा जिन भगवान की।।
।।जिनकी०।।वंदे जिनवरम्-४।।१।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं.....।

आवो हम सब करें अर्चना, पार्श्वनाथ भगवान की।
जिनकी भक्ती से प्रगटित हो, ज्योति आतम ज्ञान की।।
।।वंदे जिनवरम्-४।।

मलयागिरि का शीतल चंदन, केशर संग घिसाया है।
प्रभु के चरण कमल में चर्चत, भव संताप मिटाया है।।
तन मन को शीतल कर देती, अर्चा जिन भगवान् की।।
।।जिनकी०।।वंदे जिनवरं०।।२।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं.....।

आवो हम सब करें अर्चना, पार्श्वनाथ भगवान् की।
जिनकी भक्ती से प्रगटित हो, ज्योती आतम ज्ञान की।।
।।वंदे जिनवरम्-४।।

चिन्मय परमानंद आतमा, नहीं मिला इन्द्रिय सुख में।
प्रभु को अक्षत पुंज चढ़ाते, सौख्य अखंडित हो क्षण में।।
इन्द्र सभी मिल करें वंदना, प्रभु के अक्षयज्ञान की।।
।।जिनकी०।।वंदे जिनवरं०।।३।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं.....।

आवो हम सब करें अर्चना, पार्श्वनाथ भगवान् की।
जिनकी भक्ती से प्रगटित हो, ज्योती आतमज्ञान की।।
।।वंदे जिनवरम्-४।।

रतिपति विजयी पार्श्वनाथ को, पुष्प चढ़ाऊँ भक्ती से।
निज आत्मा की सुरभि प्राप्त हो, निजगुण प्रगटे युक्ती से।।
ब्रह्मर्षीसुर स्तुति करते, चिच्चैतन्य महान् की।।
।।जिनकी०।।वंदे जिनवरम्-४।।४।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं.....।

आवो हम सब करें अर्चना, पार्श्वनाथ भगवान् की।
जिनकी भक्ती से प्रगटित हो, ज्योति आतमज्ञान की।।
।।वंदे जिनवरम्-४।।

मालपुआ रसगुल्ला बरफी, जिनवर निकट चढ़ाते ही।
नाना उदर व्याधि विघटित हो, समरस तृप्ती प्रगटे ही।।

गणधर मुनिवर भी गुण गाते, महिमा जिन भगवान् की।।
जिनकी भक्ती से प्रगटित हो, ज्योति आतम ज्ञान की।।
।।वंदे जिनवरम्-४।।५।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं.....।

आवो हम सब करें अर्चना, पार्श्वनाथ भगवान् की।
जिनकी भक्ती से प्रगटित हो, ज्योति आतमज्ञान की।।
।।वंदे जिनवरम्-४।।

केवलज्ञान सूर्य हो भगवन् ! मुझ अज्ञान हटा दीजे।
दीपक से मैं करूँ आरती, ज्ञान ज्योति प्रगटित कीजे।।
चक्रवर्ति भी करें वंदना, अतिशय ज्योतिर्मान की।।
।।जिनकी.।।वंदे जिनवरम्-४।।६।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं....।

आवो हम सब करें अर्चना, पार्श्वनाथ भगवान् की।
जिनकी भक्ती से प्रगटित हो, ज्योति आतमज्ञान की।।
।।वंदे जिनवरम्-४।।

सुरभित धूप धूपघट में मैं, खेऊँ सुरभि गगन फैले।
कर्म भस्म हो जाएं शीघ्र ही, जो हैं अशुभ अशुचि मैले।।
सम्यग्दर्शन क्षायिक होवे, मिले राह उत्थान की।।
।।जिनकी.।।वंदे जिनवरम्-४।।७।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं.....।

आवो हम सब करें अर्चना, पार्श्वनाथ भगवान् की।
जिनकी भक्ती से प्रगटित हो, ज्योती आतमज्ञान की।।
।।वंदे जिनवरम्-४।।

अनंनास मोसम्मी नींबू, सेव संतरा फल ताजे।
प्रभु के सन्मुख अर्पण करते, मिले मोक्षफल भव भाजें।।

जिनवंदन से निजगुण प्रगटे, मिले युक्ति शिवधाम की।।
जिनकी भक्ती से प्रगटित हो, ज्योति आतम ज्ञान की।।
।।वंदे जिनवरम्-४।।८।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं.....।

आवो हम सब करें अर्चना, पार्श्वनाथ भगवान् की।
जिनकी भक्ती से प्रगटित हो, ज्योती आतमज्ञान की।।
।।वंदे जिनवरम्-४।।

जल गंधादिक अर्घ्य सजाकर, जिनवर चरण चढ़ा करके।
रत्नत्रय अनमोल प्राप्त कर, बसूं मोक्ष में जा करके।।
इसी हेतु त्रिभुवन जनता भी, भक्ति करे भगवान् की।।
।।जिनकी०।।वंदे जिनवरम्-४।।९।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं.....।

दोहा

कनक भृंग में मिष्ट जल, सुरगंगा सम श्वेत।
जिनपद धारा करत ही, भव जल को जल देत।।१०।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल कमल चंपा सुरभि, पुष्पांजलि विकिरंत।
मिले निजातम संपदा, होवे भव दुःख अंत।।११।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ पंचकल्याणक अर्घ्य

वंदन शत शत बार है,
पार्श्वनाथ के चरण कमल में, वंदन शत शत बार है।
जिनका गर्भ कल्याणक जजते, मिले सौख्य भंडार है।।
पार्श्वनाथ०।।टेक०।।

अश्वसेन पितु वामा माता, तुमको पाकर धन्य हुए।
तिथि वैशाख वदी द्वितीया को, गर्भ बसे जगवंद्य हुए।।

प्रभु का गर्भकल्याणक पूजत, मिले निजातम सार है।।
पार्श्वनाथ०।।१।।

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णाद्वितीयायां श्रीपार्श्वनाथजिनगर्भकल्याणकाय अर्घ्यं.....।

वंदन शत शत बार है,
पार्श्वनाथ के चरण कमल में, वंदन शत शत बार है।
जिनका जन्मकल्याणक जजते, मिले सौख्य भंडार है।।
पार्श्वनाथ०।।

पौष कृष्ण ग्यारस तिथि उत्तम, वाराणसि में जन्म हुआ।
श्री सुमेरु की पांडुशिला पर, इन्द्रों ने जिन न्हवन किया।।
जो ऐसे जिनवर को जजते, हो जाते भव पार हैं।।
पार्श्वनाथ०।।२।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णाएकादश्यां श्रीपार्श्वनाथजिनजन्मकल्याणकाय अर्घ्यं.....।

वंदन शत शत बार है,
पार्श्वनाथ के चरण कमल में, वंदन शत शत बार है।
जिनका तपकल्याणक जजते, मिले सौख्य भंडार है।।
पार्श्वनाथ०।।

पौषवदी ग्यारस जाति स्मृति, से बारह भावन भाया।
विमलाभा पालकि में प्रभु को, बिठा अश्ववन पहुँचाया।।
स्वयं प्रभू ने दीक्षा ली थी, जजत मिले भव पार है।।
पार्श्वनाथ०।।३।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णाएकादश्यां श्रीपार्श्वनाथजिनदीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं.....।

वंदन शत शत बार है,
पार्श्वनाथ के चरण कमल में, वंदन शत शत बार है।
जिनका ज्ञानकल्याणक जजते, मिले सौख्य भंडार है।।
पार्श्वनाथ०।।

चैत्रवदी सुचतुर्थी[१] प्रातः, देवदारु तरु के नीचे।
कमठ किया उपसर्ग घोर तब, फणपति पद्मावति पहुँचे।।
जित उपसर्ग केवली प्रभु का, समवसरण हितकार है।।
पार्श्वनाथ०।।४।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाचतुर्थ्यां श्रीपार्श्वनाथजिनकेवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं.....।

वंदन शत शत बार है,
पार्श्वनाथ के चरण कमल में, वंदन शत शत बार है।
जिनका मोक्षकल्याणक जजते, मिले सौख्य भंडार है।।
पार्श्वनाथ०।।

श्रावण शुक्ल सप्तमी पारस, सम्मेदाचल पर तिष्ठे।
मृत्युजीत शिवकांता पायी, लोकशिखर पर जा तिष्ठे।।
सौ इन्द्रों ने पूजा करके, लिया आत्म सुखसार है।।
पार्श्वनाथ०।।५।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लासप्तम्यां श्रीपार्श्वनाथजिनमोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं.....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य (१०८)

दोहा

चिन्मूरत चिंतामणि, पार्श्वनाथ भगवान्।
पुष्पांजलि से पूजहूँ, करूँ आप गुणगान।।१।।

अथ मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्तरंगानन्तचतुष्टय-बहिरंगाष्टमहाप्रातिहार्यलक्ष्मीसमन्विताय 'श्रीमान्' इति नाम विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्तरङ्ग-बहिरंगपरिग्रहविरहितदिगम्बरमुद्रांकितमुनिगणस्वामिने 'निर्ग्रन्थराट्' नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

१. कल्याणमाला पुस्तक में चतुर्थी तिथि है। उत्तरपुराण में चौदश है।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वज्ञानादिगुणस्वरूपधनयुक्ताय 'स्वामी' इति गुणविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

ॐ ह्रीं अर्हं द्वादशसभारूपगणाधिपतये 'गणेश' नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वजगत्स्वामिने 'विश्वनायक' नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंस्वपुरुषार्थेन अर्हत्पदप्राप्ताय 'स्वयंभू' नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

ॐ ह्रीं अर्हं वृषनामधर्मेण शोभिताय 'वृषभ' गुणविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

ॐ ह्रीं अर्हं हितोपदेशेन समस्तजीवपोषणाय अनन्तगुणधारकाय 'भर्ता' इति गुणविशिष्टाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हं समस्तपदार्थस्वस्मिन् प्रतिबिंबीकरणाय 'विश्वात्मा' इति नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुनर्जन्मरहिताय 'अपुनर्भव' गुणविशिष्टाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वपदार्थावलोकिने 'सर्वदर्शी' इति गुणविभूषिताय श्रीपार्श्व-नाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनस्वामिने 'जगन्नाथ' गुणविशिष्टाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मस्वरूपात्मने 'धर्मात्मा' इति नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वजनहितकारिणे 'धर्मबान्धव' नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मप्राणस्वरूपाय 'धर्ममूर्ति' नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वोत्कृष्टधर्मकारकाय 'महाधर्मकर्ता' इति नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमधर्मदात्रे 'धर्मप्रद' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७।।

ॐ ह्रीं अर्हं विशिष्टैश्वर्यसहिताय 'विभु' गुणविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्पर्शरसगंधवर्ण स्वरूपमूर्तगुणविरहिताय 'अमूर्त' नामविभूङ्ग षिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमोत्कृष्टपुण्यस्वरूपाय 'अत्यन्त पुण्यात्मा' इति नाम-समन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०।।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्तविरहिताय 'अनन्त' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्यसहिताय 'अनन्तशक्तिमान्' इति नामधेयाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२।।

ॐ ह्रीं अर्हं भव्यजनशरणदानकुशलाय 'शरण्य' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३।।

ॐ ह्रीं अर्हं अखिललोकहितंकरस्वामिने 'विश्वलोकेश' नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमकारुणिकगुणान्विताय 'दयामूर्ति' गुणविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२५।।

ॐ ह्रीं अर्हं महत्पदप्रदानसमर्थमहाव्रतसहिताय 'महाव्रती' इति गुण-विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वश्रेष्ठप्रशस्तवचनसहिताय 'वाग्मी' इति नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरणसभायां चतुर्दिग्मुखप्रदर्शिताय 'चतुर्मुख' नामप्रसिद्धाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२८।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वकीयगुणवृद्धिंकराय 'ब्रह्मा' इति नामविभूषिताय श्रीपार्श्व-नाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२९।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वकर्मविप्रमुक्ताय 'निष्कर्मा' इति नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३०।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वप्रकारेण पञ्चेंद्रियमनोविजयिने 'निर्जितेन्द्रिय' गुण-समन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३१।।

ॐ ह्रीं अर्हं कामदेवमल्लविजयिने 'मारजित्' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तसंसारमूलकारणमिथ्यात्वविजयिने 'जितमिथ्यात्व' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३।।

ॐ ह्रीं अर्हं घातिकर्मविघातकाय 'कर्मघ्न' नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४।।

ॐ ह्रीं अर्हं मृत्युमहामल्लस्यान्तकरणकुशलाय 'यमान्तक' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५।।

ॐ ह्रीं अर्हं दिग्वस्त्रधारकनिर्विकारनग्नमुद्रांकिताय 'दिगम्बर' नामविभू-षिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानेन त्रिभुवनज्ञायकगुणान्विताय 'जगद्व्यापी' इति नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७।।

ॐ ह्रीं अर्हं अखिलभव्यजनहितकारिणे 'भव्यबंधु' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३८।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रैलोक्यगौरवपदप्राप्ताय 'जगद्गुरु' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वजनमनोरथपूर्णकरणनिपुणाय 'कामद' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४०।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जयिमदनरिपुमर्दकाय 'कामहंता' इति गुणविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४१।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनजनातिप्रियसौंदर्यप्राप्ताय 'सुन्दर' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वजनताल्हादनकराय 'आनन्ददायक' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४३।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मशत्रुविजयिनामपि वर्याय 'जिनेंद्र' नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४४।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानुबंध्यादिकर्मविजयिस्वामिने 'जिनराट्' नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४५।।

ॐ ह्रीं अर्हं संपूर्णकेवलज्ञानापेक्षया सर्वत्र विश्वव्यापकाय 'विष्णु' नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४६।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रैलोक्यपूज्यपरमपदे स्थिताय 'परमेष्ठी' इति नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४७।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनादिकालाद् ज्ञानस्वभावाय 'पुरातन' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४८।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानैकज्योतिर्मयाय 'ज्ञानज्योतिः' नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४९।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमपावनस्वभावाय 'पूतात्मा' इति नामविशिष्टाय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५०।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वजगत्प्रसिद्धहरिहरादिष्वपि श्रेष्ठाय 'महान्' इति नामविशिष्टाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१।।

ॐ ह्रीं अर्हं संसारिजन-इन्द्रियैरग्राह्याय 'सूक्ष्म' गुणविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५२।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगत्स्वामिने 'जगत्पति' नाम विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५३।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वोदयीपरम-अहिंसामयी धर्मचक्रप्रवर्तकाय 'धर्मचक्रि' गुणविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५४।।

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तशान्तस्वभावपरिणताय 'प्रशान्तात्मा' इति गुण-समन्विताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५५।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्माञ्जनलेपविरहिताय 'निर्लेप' गुणसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५६।।

ॐ ह्रीं अर्हं द्रव्यस्वभावापेक्षया कल-शरीरविरहिताय 'निष्कल' नाम-समन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७।।

ॐ ह्रीं अर्हं मृत्युमहामल्लविजयिने 'अमर' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धबुद्धस्वभाव-स्वात्मोपलब्धिस्वरूपाय 'सिद्ध' नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९।।

ॐ ह्रीं अर्हं परिपूर्णकेवलज्ञानयुक्ताय 'बुद्ध' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६०।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्ख्यातिप्राप्तात्मने 'प्रसिद्धात्मा' इति गुणविशिष्टाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६१।।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्तरंग-बहिरंगविभूतिधारकत्रिजगत्पूज्याय 'श्रीपति' नाम-समन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रसिद्धपुरुषाणामपि श्रेष्ठपदप्राप्ताय 'पुरुषोत्तम' नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६३।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वभाषामयीदिव्यध्वनिस्वामिने 'दिव्यभाषापति' नाम-विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६४।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंप्रकाशपुञ्जसुंदराय 'दिव्य' नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६५।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वकीयशुद्धबुद्धनित्यनिरंजनस्वभावात् च्यवनविरहिताय 'अच्युत' नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६६।।

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यैश्वर्यसमन्वितशतेन्द्रनम्रीभूतकरणसमर्थ-परमैश्वर्यविभूषिताय 'परमेश्वर' नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६७।।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्तरंगबहिरंगतपश्चरणबलेन तपनशीलात्मस्वभावाय 'महातपा' इति नामसहिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६८।।

ॐ ह्रीं अर्हं कोटिसूर्यचन्द्रातिशायिप्रकाशसहिताय 'महातेजा' इति नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६९।।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्तिमशुक्लध्यानपरिणतस्वभावाय 'महाध्यानी' इति गुणसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७०।।

ॐ ह्रीं अर्हं द्रव्यकर्मभावकर्मनोकर्मरूपाञ्जनविरहिताय 'निरञ्जन' नामधार-काय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७१।।

ॐ ह्रीं अर्हं अहिंसामयीपरमधर्माम्नायकर्त्रे 'तीर्थकर्ता' इति नामविशिष्टाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७२।।

ॐ ह्रीं अर्हं हेयोपादेयविचारविज्ञाय 'विचारज्ञ' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७३।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वपरभेदविज्ञानबलेन सर्वोत्तमज्ञानप्राप्ताय 'विवेकी' इति नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७४।।

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टादशसहस्त्रशीलगुणभूषिताय 'शीलभूषण' -नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७५।।

ॐ ह्रीं अर्हं अपरिमितमाहात्म्यसमन्विताय 'अनन्तमहिमा' इति नामविभू-षिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७६।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वभव्यजीवहितकरणसमर्थाय 'दक्ष' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७७।।

ॐ ह्रीं अर्हं शरीरालंकरणकारणनानाभूषणविरहिताय 'निर्भूष' नामविभू-षिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७८।।

ॐ ह्रीं अर्हं शत्रुनिवारणहेतुनानाविधायुध-शस्त्रविरहिताय 'विगतायुध' नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७९।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोकज्ञायकाय 'सर्वज्ञ' नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८०।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वचराचरजगदवलोकनकराय 'सर्वदृक्' नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।।८१।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वजनहितैषिणे 'सार्व' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८२।।

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तसौम्यस्वभावाय 'सुसौम्यात्मा' इति नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८३।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मशत्रुविजयिजिनानां मुख्याय 'जिनाग्रणी' इति नाम-विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८४।।

ॐ ह्रीं अर्हं अपराजितादिचतुरशीतिलक्षमंत्रस्वरूपाय 'मंत्रमूर्ति' नामधार-काय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८५।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वदेवेषु श्रेष्ठमहापूजाप्राप्ताय 'महादेव' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८६।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्णिकायदेवानामुपरि श्रेष्ठपरमोत्तमदेवपदप्राप्ताय 'देवदेव' नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८७।।

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तस्वच्छपवित्रहृदयाय 'अतिनिर्मल' नामप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८८।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वकार्यपूर्णीकृताय 'कृतकृत्य' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८९।।

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टादशमहादोषविरहिताय 'अतिनिर्दोष' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९०।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पालकस्वरूपाय 'परंब्रह्मा' इति नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्रायअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९१।।

ॐ ह्रीं अर्हं अतिशयगुणधारकाय 'महागुणी' इति नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९२।।

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्य-परमौदारिकदेहसमन्विताय 'दिव्यदेह' विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९३।।

ॐ ह्रीं अर्हं अतिशयसौंदर्यगुणसमन्विताय 'महारूप' नामधारकाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९४।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वभावदृष्ट्या विनाशविरहिताय 'नित्य' नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९५।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशक्तिमद्मृत्युमल्लविजयिने 'मृत्युंजय' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९६।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वकार्यकरणसमर्थाय 'कृती' इति नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९७।।

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षपदप्रापणकारणसर्वयम-नियमसमन्विताय 'यमी' इति नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेण्यारोहणसमर्थयतीनामीश्वराय 'यतीश्वर' नामविशिष्टाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९९।।

ॐ ह्रीं अर्हं षट्कर्मरूपजगत्सृष्टि-उपदेशकाय 'स्त्रष्टा' इति नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१००।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनभव्यजनस्तुतियोग्याय 'स्तुत्य' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०१।।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्तरंगकर्ममलबहिरंगशरीरादिमलविरहितपवित्राय 'पूत' नामविशिष्टाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०२।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विधदेवगणशतेन्द्रपूजिताय 'अमरार्चित' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०३।।

ॐ ह्रीं अर्हं समस्तविद्यानां स्वामिने 'विद्येश' नामसमन्विताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०४।।

ॐ ह्रीं अर्हं मनोवचनकाययोगनिमित्तात्मप्रदेश-परिष्पंदनक्रियाविरहिताय 'निष्क्रिय' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०५।।

ॐ ह्रीं अर्हं दशलक्षण-रत्नत्रय-दयामय-वस्तुस्वभावरूपधर्मसमन्विताय 'धर्मी' इति नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०६।।

ॐ ह्रीं अर्हं सद्योजातबालकवन्निर्विकाररूपधारकाय 'जातरूप' नाम-विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०७।।

ॐ ह्रीं अर्हं मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानिनां सयोग्ययोगिकेवलिनामपि श्रेष्ठतमाय भव्यभाक्तिकजनानां ईप्सितकेवलज्ञानलक्ष्मीप्रदानकुशलाय 'विदांवर' नामविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०८।।

पूर्णार्घ्य-शंभु छंद

हे पार्श्वनाथ भगवन्! तुमको, जो एक मंत्र से भी यजते।
वे भविजन त्रिभुवन की लक्ष्मी, पाने में भी समरथ बनते।।
फिर जो जन एक सौ आठ-मंत्र से, अर्घ्य समर्पण करते हैं।
वे स्वात्मसिद्धि के इच्छुक जन, परमानंदामृत लभते हैं।।१०९।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वरोगशोकदुःख-दारिद्र्योपद्रवनाशनसमर्थाय श्रीमदा-दिविदांवरपर्यंताष्टोत्तरशतनाममंत्रसमन्विताय संपूर्णऋद्धिसिद्धिसुखसंपत्तिप्रदायकाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य मंत्र- **ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धरणेन्द्रपद्मावतीसेवित-चरणकमलाय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय नमः।**

(सुगंधित पुष्प, लवंग या पीले चावलों से १०८ बार मंत्र जाप्य करें।)

जयमाला

(शंभु छंद-तर्ज-चंदन सा वदन.....)

जय पार्श्व प्रभो! करुणासिंधो! हम शरण तुम्हारी आये हैं।
जय जय प्रभु के श्री चरणों में, हम शीश झुकाने आये हैं।।टेक०।।

नाना महिपाल तपस्वी बन, पंचाग्नी तप कर रहा जभी।
प्रभु पार्श्वनाथ को देख क्रोध वश लकड़ी फरसे से काटी।।
तब सर्प युगल उपदेश सुना, मर कर सुर पद को पाये हैं।।
जय०।।१।।

यह सर्प सर्पिणी धरणीपति, पद्मावति यक्षी हुए अहो।
नाना मर शंबर ज्योतिष सुर, समकित बिन ऐसी गती अहो।।
नहिं ब्याह किया प्रभु दीक्षा ली, सुर नर पशु भी हर्षाये हैं।
जय०।।२।।

प्रभु अश्वबाग में ध्यान लीन, कमठासुर शंबर आ पहुँचा।
क्रोधित हो सात दिनों तक बहु, उपसर्ग किया पत्थर वर्षा।।
प्रभु स्वात्म ध्यान में अविचल थे, आसन कंपते सुर आये हैं।।
जय०।।३।।

धरणेंद्र व पद्मावति ने फण पर, लेकर प्रभु की भक्ती की।
रवि केवलज्ञान उगा तत्क्षण सुर समवसरण की रचना की।।
अहिच्छत्र नाम से तीर्थ बना, अगणित सुरगण हर्षाये हैं।।
जय०।।४।।

यह देख कमठचर शत्रू भी, सम्यक्त्वी बन प्रभु भक्त बने।
मुनिनाथ स्वयंभू आदिक दश, गणधर थे ऋद्धीवंत घने।।

सोलह हजार मुनिराज प्रभू के, चरणों में शिर नाये हैं।।
जय०।।५।।

गणिनी सुलोचना प्रमुख आर्यिका, छत्तिस सहस धर्मरत थीं।
श्रावक इक लाख श्राविकायें, त्रय लाख वहाँ जिन भाक्तिक थीं।।
प्रभु सर्प चिन्ह तनु हरित वर्ण, लखकर रवि शशि शर्माये हैं।।
जय०।।६।।

नव हाथ तुंग सौ वर्ष आयु, प्रभु उग्र वंश के भास्कर हो।
उपसर्ग जयी संकट मोचन, भक्तों के हित करुणाकर हो।।
प्रभु महा सहिष्णू क्षमासिंधु, हम भक्ती करने आये हैं।।
जय०।।७।।

चौंतिस अतिशय के स्वामी हो, वर प्रातिहार्य हैं आठ कहे।
आनन्त्य चतुष्टय गुण छ्यालिस, फिर भी सब गुण आनन्त्य कहे।।
बस केवल ''ज्ञानमती'' हेतू, प्रभु तुम गुण गाने आये हैं।।
जय पार्श्व प्रभो! करुणासिंधो! हम शरण तुम्हारी आये हैं।।८।।

दोहा

जो पूजें नित भक्ति से, पार्श्वनाथ पदपद्म।
शक्ति मिले सर्वंसहा, होवे परमानंद।।१।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं.....।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

शेरछंद

जो भव्य पार्श्वनाथ का विधान ये करें।
वे आधि व्याधि संकटादि कष्ट परिहरें।।
अतिशायि पुण्यबंध से ईप्सित सफल करें।
''सज्ज्ञानमती'' से अनन्त संपदा वरें।।१।।

इत्याशीर्वादः। पुष्पांजलिः।।

❖❖❖

प्रशस्ति

शंभु छंद

कुण्डलपुरि में महावीर प्रभू-ने जन्म लिया जग पूज्य हुई।
माता के नंद्यावर्त महल - में रत्नों की अति वृष्टि हुई।।
यहाँ जिनमंदिर निर्माणकार्य, चल रहा तीव्रगति से सुखप्रद।
मेरा यहाँ वर्षायोग काल, स्वाध्याय ध्यान से है सार्थक।।१।।

श्रीपार्श्वनाथ का लघु विधान, मंत्रों की रचना भक्तीवश।
यह रोग शोक दारिद्र्य दुःख, संकट हरने वाला संतत।।
वीराब्द पच्चीस सौ उन्तिस, श्रावण-मास शुक्ल एकम तिथि में।
यह विधान रचना पूर्ण हुई, होवे मंगलकर सब जग में।।२।।

इस युग के चारित्र चक्री श्री-आचार्य शांतिसागर गुरुवर।
बीसवीं सदी के प्रथम सूरि, इन पट्टाचार्य वीरसागर।।
ये दीक्षा गुरुवर मेरे हैं, मुझ नाम रखा था 'ज्ञानमती'।
इनके प्रसाद से ग्रन्थों की, रचना कर हुई अन्वर्थमती।।३।।

महावीर प्रभू की सवा दश फुट, जिनप्रतिमा अतिशय सुन्दर है।
त्रयकालिक चौबिस तीर्थंकर-की प्रतिमा यहाँ बहत्तर हैं।।
ऋषभेश्वर की सवा ग्यारह फुट, ऊंची पद्मासन प्रतिमा है।
नवग्रह शांतिकर नव जिनवर-प्रतिमा जिनकी अति महिमा है।।४।।

वर 'नंद्यावर्त महल' सुंदर, जो सात खण्ड का दीखेगा।
'श्रीशांतिनाथ' चैत्यालय से, सब जग में शांतीप्रद होगा।।
जब तक 'कुण्डलपुर तीर्थ' रहे, तब तक जिनशासन अमर रहे।
मुझ 'गणिनी ज्ञानमती' कृत 'पारस प्रभु विधान' भी अमर रहे।।५।।

श्री पार्श्वनाथ विधान प्रशस्ति समाप्ता।
जीयाद् वीरस्य शासनम् ।

❖❖❖

श्री पार्श्वजिन स्तोत्र

भवसंकट हर्ता पार्श्वनाथ! विघ्नों के संहारक तुम हो।
हे महामना हे क्षमाशील! मुझमें भी पूर्ण क्षमा भर दो।।
यद्यपि मैंने शिव पथ पाया, पर यह विघ्नों से भरा हुआ।
इन विघ्नों को अब दूर करो, सब सिद्धि लहूँ निर्विघ्नतया।।१।।

वाराणसि नगरी धन्य हुई, धन धन्य हुए सब नर नारी।
हे अश्वसेननंदन ! तुम से, वामा माँ भी मंगलकारी।।
वैशाख वदी वह दूज भली, माता उर आप पधारे थे।
श्री आदि देवियों ने आकर, माता से प्रश्न विचारे थे।।२।।

शुभ पौष वदी ग्यारस तिथि थी, जब आए प्रभु साक्षात् यहां।
शैशव में सुर संग खेल रहे, अहियुग को दीना मंत्र महा।।
तव नागयुगल धरणेन्द्र तथा, पद्मावती होकर भक्त बने।
शुभ पौष वदी ग्यारस के दिन, प्रभु दीक्षा ले मुनि श्रेष्ठ बने।।३।।

तत्क्षण मनपर्ययज्ञानी हो, सब ऋद्धी से परिपूर्ण हुए।
इक समय सघन वन के भीतर, प्रभु निश्चल ध्यानारूढ़ हुए।।
कमठासुर ने उपसर्ग किया, अग्नी ज्वाला को उगल-उगल।
पत्थर फेंके मूसलधारा, वर्षायी आंधी उछल-उछल।।४।।

निष्कारण ही कमठासुर ने, दश भव तक बैर निकाला था।
प्रभु को दुख दे देकर उसने, खुद को दुर्गति में डाला था।।
प्रभु महासहिष्णु क्षमा सिन्धु, भव-भव से सहते आये हैं।
तन से ममता को छोड़ दिया, नहिं किंचित् भी घबराए हैं।।५।।

प्रभु क्षपक श्रेणि में चढ़ करके, मोहनी कर्म का नाश किया।
उस ही क्षण धरणीपति पद्मावती, आ करके बहुभक्ति किया।।
प्रभु को मस्तक पर धारण कर, ऊपर से फण का छत्र किया।
प्रभुवर ने ही उस ही क्षण में, कैवल्य श्री को वरण किया।।६।।

पृथ्वी से बीस हजार हाथ, ऊपर पहुँचे अर्हन्त बने।
इन्द्रों के आसन कांप उठे, प्रभु समवसरण गगनांगण में।।
वदि चैत्र चतुर्थी तिथि उत्तम, जब प्रभु में ज्ञान प्रकाश हुआ।
उस स्थल का उस ही क्षण से, 'अहिच्छत्र' तीर्थ यह नाम हुआ।।७।।

नव हाथ देह सौ वर्ष आयु, मरकतमणि सम आभाधारी।
अहि चिह्न सहित वे पार्श्वप्रभो! मुझको हों नित मंगलकारी।।
श्रावण सुदि सप्तमि तिथि के दिन, सिद्धीकांता से प्रीति लगी।
मैं नमूं 'ज्ञानमती' तुम्हें सदा, मेरी हो सर्वंसहा मती।।८।।

आरति श्री पार्श्वनाथ भगवान की

तर्ज-करती हूँ तुम्हारी पूजा.....।

करते हैं प्रभु की आरति, मन का दीप जलेगा।
पारस प्रभु की भक्ती से, मन संक्लेश धुलेगा।।
जय पारस देवा, जय पारस देवा-२।।।
हे अश्वसेन के नन्दन, वामा माता के प्यारे।
तेईसवें तीर्थंकर पारस, प्रभु तुम जग से न्यारे।।
तेरी भक्ती गंगा में, जो स्नान करेगा।
पारस प्रभु की भक्ती से, मन संक्लेश धुलेगा।।
जय पारस देवा, जय पारस देवा-२।।१।।
वाराणसि में जन्मे, निर्वाण शिखर जी से पाया।
इक लोहा भी प्रभु चरणों में, सोना बनने आया।।
सोना ही क्या वह लोहा, पारसनाथ बनेगा।
पारस प्रभु की भक्ती से, मन संक्लेश धुलेगा।।
जय पारस देवा, जय पारस देवा-२।।२।।
सुनते हैं जग में वैर सदा, दो तरफा चलता है।
पर पार्श्वनाथ का जीवन, इसे चुनौती करता है।।
इक तरफा बैरी ही कब तक, उपसर्ग करेगा।
पारस प्रभु की भक्ती से, मन संक्लेश धुलेगा।।
जय पारस देवा, जय पारस देवा-२।।३।।
कमठासुर ने बहुतेक भवों में, आ उपसर्ग किया।
पारसप्रभु ने सब सहकर, केवलपद को प्राप्त किया।।
कैवल्य ज्योति से पापों का, अंधेर मिटेगा।
पारस प्रभु की भक्ती से, मन संक्लेश धुलेगा।।
जय पारस देवा, जय पारस देवा-२।।४।।
प्रभु तेरी आरति से मैं भी, यह शक्ति पा जाऊं।
''चन्दनामती'' तव गुणमणि की, माला यदि पा जाऊं।।
तब जग में नहिं शत्रू का, मुझ पर वार चलेगा।
पारस प्रभु की भक्ती से, मन संक्लेश धुलेगा।।
जय पारस देवा, जय पारस देवा-२।।५।।

❖❖❖

भजन

तर्ज-फूलों सा चेहरा तेरा.....

शाश्वत है तीरथ मेरा, सम्मेदगिरि नाम है।
गिरिवरों में श्रेष्ठ है, आदि सिद्धक्षेत्र है, मधुवन परम धाम है।

कहते हैं इस गिरि की वन्दना से,
तिर्यंच नरकायु मिलती नहीं है।
श्रद्धा सहित इसकी अर्चना से,
भव्यत्व कलिका खिलती रही है।।

रात अंधेरी हो, भक्ति सहेली हो, लगता न डर पर्वत पर कभी।
अतिशय से गूँजे यहाँ, सांवरिया का नाम है।
गिरिवरों में श्रेष्ठ है, आदि सिद्धक्षेत्र है, मधुवन परम धाम है।।१।।

इस युग के चौबीस तीर्थंकरों में,
मोक्ष गए बीस जिनवर यहाँ से।
कितने करोड़ों मुनियों ने भी,
तप करके शिवालय पाया यहाँ से।।

तीर्थ पुराना है, श्रेष्ठ खजाना है, सबको तिराता है संसार से।
तीरथ की कीरत अमर, कर सकता इंसान है।
गिरिवरों में श्रेष्ठ है, आदि सिद्धक्षेत्र है, मधुवन परम धाम है।२।।

जिनधर्म निधि को पाकर के उसका,
सच्चा सदुपयोग करना है हमको।
आपस में मैत्री, दीनों पे करुणा,
का भाव जग में सिखाना है सबको।।

स्वार्थ त्याग करके, शीघ्र जाग करके, जैनत्व की सब रक्षा करो।
तीरथ की रज ''चन्दना'' मस्तक का परिधान है।
गिरिवरों में श्रेष्ठ है, आदि सिद्धक्षेत्र है, मधुवन परम धाम है।।३।।

❖❖❖

भजन

रचयित्री-आर्यिका चन्दनामती

(तर्ज-माई रे माई.....)

मुनिसुव्रत की जन्मभूमि से, गूंज उठा इक नारा।
पार्श्वनाथ का महामहोत्सव, करे जगत यह सारा॥
बोलो वाराणसी की जय, बोलो पार्श्वनाथ की जय॥ टेक.॥

पारस प्रभु तेइसवें तीर्थंकर हैं जैनधरम के।
वाराणसि में जन्मे, राजा अश्वसेन के घर में॥
वामा माता धन्य हो गईं, इन्द्र करें जयकारा।
पार्श्वनाथ का महामहोत्सव, करे जगत यह सारा॥ बोलो...॥1॥

गर्भ जन्म तप तीन कल्याणक, वाराणसि में मनाये।
इन्द्र ज्ञानकल्याण मनाने, अहिच्छत्र में आये॥
श्री सम्मेदशिखर पर्वत से, प्राप्त किया शिवद्वारा।
पार्श्वनाथ का महामहोत्सव, करे जगत यह सारा॥ बोलो...॥2॥

पारस प्रभु की तृतिय सहस्त्राब्दी का उत्सव आया।
गणिनीप्रमुख ज्ञानमती माता ने सबको समझाया॥
ऋषभ-वीर के बाद करो अब, तृतिय महोत्सव प्यारा।
पार्श्वनाथ का महामहोत्सव, करे जगत यह सारा॥ बोलो...॥3॥

उत्सव और महोत्सव कर, जिन धर्म की शान बढ़ाओ।
इस माध्यम से सभी जैन मिल, एक मंच पर आओ॥
तभी ''चन्दनामती'' धर्म का, ध्वज लहराए प्यारा।
पार्श्वनाथ का महामहोत्सव, करे जगत यह सारा॥

बोलो वाराणसी की जय, बोलो पार्श्वनाथ की जय।
बोलो अहिच्छत्र की जय,श्री सम्मेदशिखर की जय॥4॥

मण्डल का नक्शा